ब्राह्मण महिमा क्यों और कैसे?

—रामस्वरूप वर्मा

ब्राह्मण महिमा
क्यों और कैसे ?

लेखक :
महामना रामस्वरूप वर्मा
संस्थापक अर्जक संघ

★

मूल्य : 50/-

★

अर्जक संघ

ब्राह्मण महिमा क्यों और कैसे?

★

लेखक :

महामना रामस्वरूप वर्मा

संस्थापक अर्जक संघ

★

प्रकाशक :

अर्जक संघ

केन्द्रीय कार्यालय, 117/2, ओ-ब्लाक, गीता नगर, कानपुर

मो० : 09839031178, 08299824329

★

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

★

मुद्रक :

अक्षय प्रकाशन

128/1/43, यशोदा नगर, कानपुर

मो० : 9336210971

★

ग्यारहवां संस्करण : 1000 प्रतियाँ, 14 अप्रैल, 2023 (चेतना दिवस)

प्रकाशकीय

प्रस्तुत पुस्तक अर्जक संघ के संस्थापक श्री राम स्वरूप वर्मा के उन पत्रों का संग्रह है जो उन्होंने रामचरित मानस चतुश्शताब्दी के अवसर पर भारत के तात्कालिक राष्ट्रपति श्री वराह वेंकट गिरि व भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी को लिखे थे। उन पत्रों का उत्तर राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री किसी ने भी नहीं दिया। ब्राह्मणवादियों ने राम को मर्यादा पुरुषोत्तम और रामचरितमानस को आदर्श ग्रंथ घोषित किया है चतुष्शताब्दी समारोह को उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री पंडित कमलापति त्रिपाठी ने जब एक लाख रुपया दिया तब श्री रामस्वरूप वर्मा ने 4 जून 1973 को 'मर्यादा पुरुषोत्तम या ब्राह्मण गुलाम' लेख लिखकर जनता का भ्रम निवारण किया। 1974 के पावस कालीन विधानसभा सत्र में एक एम. एल.ए. ने विधानसभा में रामचरित मानस का पन्ना फाड़ दिया और उस पर ब्राह्मणवादियों ने वितण्डा खड़ा किया तो उसका जवाब महामना रामस्वरूप वर्मा ने 8 अगस्त 1974 को 'क्या रामचरित मानस धार्मिक ग्रंथ है?' लेख में दिया। 24 दिसम्बर को तमिलनाडु की राजधानी मद्रास (अब चेन्नई) में रावण लीला करके राम, लक्ष्मण अेर सीता के 19 फीट ऊंचे पुतलों को जलाया गया। इस पर देश भर के ब्राह्मणवादियों ने हल्ला मचाया उससे उत्पन्न भ्रम के निवारणार्थ श्री रामस्वरूपवर्मा ने 'राम रावण काल्पनिक पात्र' लेख 15 मार्च, 1974 को लिखा। इन तीन लेखों के जुड़ने से यद्यपि पुस्तक का कलेवर काफी बड़ा हो गया है, किन्तु रामचरित मानस पर गंभीर अध्ययन के लिये यह पुस्तक समाजोपयोगी हो गयी है। इतना ही नहीं इन लेखों से ब्राह्मणवादी मूल्यों का पर्दाफाश भी हुआ है। सन् 1977 के चुनावों के पूर्व श्री गिरि राष्ट्रपति पद से हट गये और चुनाव के बाद श्रीमती इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री न रह पाईं। अतः उनके नाम से पुस्तक का उल्लेख बेमानी हो गया। इसलिये अब उसका नाम 'ब्राह्मण महिमा क्यों और कैसे?' रख दिया गया। ऐतिहासिक दृष्टि से और कोई परिवर्तन करना वांछनीय नहीं था इसलिये कोई परिवर्तन नहीं किया गया। इस प्रकार इस पुस्तक का यह संस्करण अत्यंत उपयोगी भ्रमनाशक और मानववादी मूल्यों की प्रतिष्ठा करने में अत्यंत सहायक सिद्ध होगा।

रामचरित मानस ने देश में ब्राह्मणवाद का पोषण कर जो अज्ञान जनता में फैलाया इस पुस्तक ने उसे ऐसे ही छांट दिया जैसे अंधकार को प्रकाश को छांट देता है। इस पुस्तक को पढ़कर दवे पिछड़ों ने रामायण पढ़ना बन्द कर दिया है, यही इस पुस्तक की महान उपलब्धि है। अब अर्जक संघ अधिक सुदृढ़

और व्यापक हो गया है, जिससे आशा है कि यह पुस्तक अधिक लोगों के पास पहुँचकर अपने प्रकाश से उनके मनों में जमें अन्धविश्वास का नाश और ज्ञान का प्रकाश करेगी।

ब्राह्मण महिमा क्यों और कैसे ? के सात संस्करण अब तक बिक चुके हैं, परिणाम यह है कि ब्राह्मणवाद की प्रबल पोषक रामचरित मानस में जो अज्ञान भरा हुआ है उसे दूर करने में यह पुस्तक समर्थ हुई है। 1989 में रामजन्म भूमि और बाबरी मस्जिद का विवाद अयोध्या में तूल पकड़ा लेकिन इस पुस्तक का ही प्रभाव था कि अयोध्या ओर उसके आसपास के लोग उस आंदोलन में नगण्य रूप में शामिल हुये। उत्तर प्रदेश के बाहर प्रदेशों से आये हुये लोगों ने मस्जिद के ढांचे को ढहाकर एक ओर हिन्दू और मुसलमान के बीच वैमनस्यता का बीज बो दिया जिसके फलस्वरूप देश के अनेक स्थानों पर हिन्दू मुस्लिम दंगे हुये, अरबों की संपत्ति नष्ट हुई और हजारों आदमी मरे तथा देश में अब तक चली आ रही समरसता पर भयानक चोट हुई। इससे यह निष्कर्ष निकलना अतिरंजना न होगी कि यदि इस पुस्तक का प्रचार देश में ज्यादा से ज्यादा किया जाये तो हिन्दू मुस्लिम लोगों में समरसता का विचार सुदृढ़ होगा। रामचरित मानस देश की 90 प्रतिशत शूद्र जनता को गुलाम बनाये रखने का प्रबल षड्यंत्र है। इसकी एक चौपाई ही इस रहस्य को खोलने के लिये पर्याप्त है। यथा 'शोचिय शूद्र विप्र अवमानी। मुखर मान प्रिय ज्ञान गुमानी।।' अर्थ- ऐसा शूद्र शोचनीय है (और देश की नब्बे प्रतिशत जनता शूद्र है) जो ब्राह्मण की इज्जत कम करे, बोलने वाला हो, इज्जत चाहता हो और अपने को समझदार समझता हो। कहना न होगा कि ये तीनों गुण किसी के भी अच्छे इंसान होने के लिये जरूरी हैं। इसका निषेध रामचरित मानस में निहित नीति का पर्दाफाश कर देता है। इसलिये हमारा सभी अर्जकों से निवेदन है कि वे इस पुस्तक को जन-जन तक पहुंचा दें ताकि देश ब्राह्मणवाद की घिनौनी चालों से अवगत हो जाए।

रामचरित मानस के विषय में पर्याप्त जानकारियाँ देने में समर्थ होने के कारण पुस्तक के कलेवर में अन्य कोई वृद्धि नहीं की जा रही है। आवश्यक सुझाव अवश्य भेजें!

-प्रकाशक

प्रस्तावना

मानव-मानव की बराबरी का सिद्धान्त मानव सभ्यता के विकास की पहली सीढ़ी है। जो सभ्यता जितनी ही अधिक विकसित होगी उसमें मानव-मानव की बराबरी उतनी ही अधिक होगी। परस्पर प्रेम, सम्मान और विश्वास की उत्पत्ति और बढ़ोत्तरी तभी संभव है जब मानव-मानव की बराबरी का सिद्धान्त प्रतिष्ठित हो। जंगलीपन का विरोधी शब्द सभ्यता है, जो लोग शक्ति को ही उचित मानते हैं और सर्वाधिक उपयुक्त को ही जीवित रहने का हकदार कहकर शक्तिशाली मनुष्य के द्वारा निर्बल के निपीड़न की हिमायत करते हैं उनको सभ्य इंसान कहना इंसानियत का मजाक होगा। ऐसा गैर बराबरी वाला इंसानी गिरोह का या तो खात्मा हो जाता है या फिर वह इंसान न रहकर गुलामी की जिन्दगी बसर करता है।

ऊपर के विश्लेषण पर ध्यान देने से यह स्पष्ट हो जाता है कि गैर बराबरी वाले इंसानी गिरोह हैवानी और जंगलीपन की जिन्दगी व्यतीत करते हैं। इस कसौटी पर यदि भारत को कसें तो स्पष्ट हो जाता है कि एक हजार वर्ष से अधिक की गुलामी का सबब उसकी सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक गैरबराबरी ही है। बौद्ध काल का भारत सभ्यता और वैभव में अभी तक आदर्श माना जाता है और आज भी भारतीय गणतंत्र का प्रमुख चिन्ह अशोक चक्र है। अशोक के समय में बौद्ध धर्म अपने चरम विकास पर पहुंचा और तभी भारत अपने वैभव और सभ्यता के भी चरम उत्कर्ष पर पहुंचा। इसका प्रमुख कारण बौद्ध धर्म में व्याप्त मानव-मानव की बराबरी का सिद्धान्त ही है। मौर्य राज्य के अंतिम वारिस राजा बृहद्रथ को जब उसके ब्राह्मण मंत्री पुष्यमित्र ने धोखे से मारकर राज्य पर कब्जा कर लिया तब फिर ब्राह्मणवाद की नींव रखी गयी। मौर्यकाल में जब मानव-मानव की बराबरी का सिद्धान्त प्रतिष्ठित हुआ तब विदेशी हमलावरों ने भारत की ओर आंख उठाकर देखना बंद कर दिया। जैसे ही ब्राह्मणवाद की नींव विश्वासघाती पुष्यमित्र ने रखी वैसे ही बौद्ध धर्म का ह्रास और ब्राह्मणवाद का विकास प्रारम्भ हुआ। उसी समय से भारत बाहरी हमलों का जोरदार शिकार हुआ। आठवीं शताब्दी में शंकराचार्य के कारण ब्राह्मणवाद अपने चरम विकास पर पहुंचा। आठवीं शताब्दी के आरम्भ होते-होते बौद्ध धर्म भारत में प्रायः समाप्त हो चुका था और ब्राह्मणवाद का सर्वत्र बोलबाला हो गया था। तभी 712 ई० में अरब के मुहम्मद बिन कासिम ने आकर 6 हजार पल्टन से सिंध के दाहिर राजा की साठ हजार पल्टन पर हमला बोल दिया। दाहिर राजा की फौज हारकर भाग गयी और सिन्ध पर विदेशियों का कब्जा हो गया। 1026 ई० में महमूद गजनवी ने तीस हजार पल्टन लेकर भारत पर आक्रमण किया और खैबर दर्रे से भारत आकर पंजाब, राजस्थान होता हुआ गुजरात पहुंचा, वहां पर ब्राह्मणवाद के प्रबल दुर्ग सोमनाथ मंदिर को ध्वस्त करके उसका माल खजाना लूटकर अपने देश वापस चला गया। तीस लाख क्षत्रिय

योद्धाओं को हराकर और सोमनाथ मंदिर को ध्वस्त करने के बाद भी भारत के
लोगों की आंखें नहीं खुलीं और वे विषमतामूलक ब्राह्मणवाद से उसी तरह चिपके
रहे। सन् 1193 ई० में मुहम्मद गोरी ने भारत पर आक्रमण किया और पृथ्वीराज
की 60 हजार क्षत्रिय सेना को 12 हजार विदेशी सैनिकों के मुकाबले मात खानी
पड़ी। फिर 1526 ई० में विदेशी हमलावर बाबर की 12 हजार पल्टन के सामने
राणा सांगा की 80 हजार क्षत्रिय सेना को पराजय का मुंह देखना पड़ा। अंग्रेजी
राज्य का विस्तार भी ऐसी ही पराजयों का समूह है। सारे इतिहास का निचोड़ यही
है कि जब भारत में मानव-मानव की बराबरी का सिद्धान्त जोर पर रहा तब भारत
का वैभव बढ़ा और विदेशियों के लिये अजेय शक्ति के रूप में दिखाई दिया, उन
दिनों विदेशी हमले नहीं हुये। किन्तु भारत में इंसान-इंसान की गैर बराबरी का
असभ्य एवं जंगली सिद्धान्त ब्राह्मणवाद के रूप में जब-जब पनपा तब-तब विदेशी
हमलावरों का शिकार होना पड़ा और देश टुकड़ों-टुकड़ों में बंट गया। मानव-मानव
की बराबरी के सिद्धान्त को प्रतिष्ठा देने वाला अशोक का भारत इतना विशाल
और संगठित था कि आज उसे आदर्श कहा जाता है। जो सत्य था आज वह कल्पना बन
गया है। लेकिन उस सत्य की प्राप्ति जिस इंसानी बराबरी के मानववादी विचारों के
कारण हुई थी आज उसे बहिष्कृत कर विषमतामूलक ब्राह्मणवादी विचार-
धारा को बढ़ावा दिया जा रहा है। क्या यह विदेशी हमलावरों को निमंत्रण देना नहीं है?
जिस ब्राह्मणवादी विचारधारा में 90 सैकड़ा लोग शूद्र, अन्त्यज और म्लेच्छ होकर
अपमान, तिरस्कार और अभाव का जीवन व्यतीत करें, क्या वह विचारधारा देश को
तरक्की की ओर ले जा सकती है? न इतिहास में कभी ऐसा हुआ है और न होना संभव है।

लेकिन दुख इस बात का है कि भारत के वर्तमान शासक इस सच्चाई से मुंह
मोड़े हुये हैं। यद्यपि भारत का संविधान सामाजिक बराबरी को स्वीकार करता है
तथापि अमल में उसके विपरीत सब काम हो रहे हैं। संपन्न ब्राह्मण परिवारों में जन्में
शासक अनर्जक होने के कारण भारत के 87 सैकड़ा अर्जकों को दिन प्रतिदिन
मिलने वाले अपमान, तिरस्कार और अभाव के घाव से भला कैसे दुःखी हो सकते
हैं। यह तो तभी संभव है जब घायल की गति घायल जाने की नीति के अनुसार
भारत के शासक ऐसे लोग हों जिनके हृदय में अर्जकों के अपमान, तिरस्कार और
अभाव की टीस मौजूद हो और वे मानव मानव की बराबरी में अटूट विश्वास
रखते हों। ब्राह्मणवादी विचारधारा के पोषक अनर्जक हों या अर्जक उनसे देश का
कल्याण होना असंभव है। वे अपनी दुर्बुद्धि के कारण विदेशी हमलावरों को
आकृष्ट कर इतिहास की पुनरावृत्ति भले ही करवा दें लेकिन मानववाद पर
आधारित समतामूलक सच्ची सभ्यता का विकास कर भारत के करोड़ों अर्जकों
का अपमान, तिरस्कार व अभाव से मुक्ति दिलाने में निश्चय ही असमर्थ रहेंगे।

ऐसी स्थिति में अर्जकों के सामने एक ही रास्ता रह गया है कि वे ब्राह्मणवादी
ग्रंथों का बहिष्कार कर ब्राह्मणवादी संस्कृति से पिण्ड छुड़ायें और जो शासन

ब्राह्मणवादी विचारधारा के पोषक या रक्षक बने उसे हटाने में प्राणपण से जुट
जायें। विषमतामूलक ब्राह्मणवाद के आधार पुनर्जन्म और भाग्यवाद हैं। सारे
ब्राह्मणवादी ग्रंथों में इन दो बातों का ही बोलबाला है। ब्राह्मणवादी ग्रंथों में अच्छाई
देखने वाले लोग यह भूल जाते हैं कि स्वादिष्ट भोजन में यदि एक बूंद भी पोटेशियम
साइनाइड का महाविष डाल दिया जाये तो उसे कोई बुद्धिमान व्यक्ति नहीं खायेगा।
उस विष को हटाकर शेष भोजन खाने का तर्क न तो वांछनीय ही होगा और न
ग्रहण करने योग्य, क्योंकि उसमें मरने की संभावना बनी रहेगी। यही हाल ब्राह्मणवादी
साहित्य का है। इससे इंसानियत निश्चय ही मर जाती है। जो ब्राह्मणवादी साहित्य
ब्राह्मण की पूजा और शूद्र की पिटाई की वकालत करे उससे देश या मानवता का हित
होना ऐसे ही असंभव है जैसे तेल पीकर प्यास बुझाना। जिस देश में ब्राह्मणवाद के कारण
मानव सभ्यता का प्रारंभिक अंश ही गायब हो उसे कायम रखना हिमाकत ही होगी।

यदि कोई व्यक्ति किसी के दरवाजे जाता है तो वह उसे बराबर का आसन
अवश्य देता है यह सारी दुनिया के इंसानों की मान्य परम्परा है और इसे मानव
सभ्यता का प्रारम्भ ही कहना चाहिये लेकिन भारत में वह गायब है। भारत का
सर्वाधिक सभ्य कहा जाने वाला जीव ब्राह्मण है। यदि भंगी, चमार आदि उसके
दरवाजे जाये तो बराबर के आसन की बात तो दूर उसे आसन ही नहीं दिया जायेगा।
वह धरती पर ब्राह्मण से नीचे बैठे ऐसी अपेक्षा वह ब्राह्मण, भंगी, चमार, आदि से
करेगा। यदि भंगी, चमार ब्राह्मण के यहां बराबर आसन पर साहसवश बैठ जाये तो
उसे पीटा जायेगा और यदि पीटने की क्षमता न हुई तो तिरस्कार और निरादर तो
उसे उस आसन से उठाकर कर ही दिया जायेगा। लेकिन जब वह ब्राह्मण स्वयं
किसी भंगी या चमार के दरवाजे जायेगा तो अपेक्षा करेगा कि उसके यहाँ सबसे
सुन्दर आसन पर बैठे। 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्' का नारा देने वाले
ब्राह्मण यह भूल जाते हैं कि जब कोई उन्हें आदरपूर्वक आसन नहीं देता तो उन्हें बुरा
लगता है तो फिर जब वे दूसरों को आसन नहीं देते तो दूसरों को बुरा लगना
स्वाभाविक है, अतः ऐसा आचरण नहीं करना चाहिये। भारत में सर्वाधिक सभ्य
समझे जाने वाले ब्राह्मण का जब यह हाल है तब बाकी लोगों के बारे में कुछ कहना
व्यर्थ होगा, क्योंकि बाकी लोग तो प्रायः ब्राह्मण का ही अनुकरण करते हैं। जब
ब्राह्मण ने फतवा दे दिया कि 'पूजिय विप्र शील गुण हीना, शूद्र न गुण गण ज्ञान
प्रवीना' तो फिर उससे मानव सुलभ सभ्यता की आशा करना व्यर्थ ही होगा। ऐसे
में यदि विदेशी हमलावरों ने सफलता पाई और उन्हें हजार वर्षों से अधिक अवधि
तक गुलाम रखा तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है! असभ्य को सभ्य लोग गुलाम
बना ही लेते हैं। क्योंकि असभ्य लोग जानवर से भी गये बीते होते हैं। जानवर तो
सहज बुद्धि के कारण रक्षा और बचाव के निश्चित आचरण करता है लेकिन
मानवता शून्य असभ्य इंसान सहज बुद्धि के अभाव और विवेक बुद्धि के
अविकसित रह जाने के कारण वैसा नहीं कर पाता है। इसी से वह गुलाम हो जाता

है। गुलामी जानवरों में नहीं पाई जाती है। हमजिन्स हमजिन्स का गुलाम कभी नहीं होता ऐसा हर जीव को सहज बुद्धि से ज्ञात है। विवेक बुद्धि वाला तो केवल इंसान है। जब यह विवेक बुद्धि का प्रयोग नहीं करता है तब इंसानियत की रक्षा नहीं हो पाती और इसे गुलाम होना पड़ता है। ब्राह्मणवादी लोग अपने दुखों को ईश्वर प्रदत्त मानकर चलते हैं और विवेक बुद्धि युक्त लोग उसके कारणों को जानकर उनसे छुटकारा पाने का प्रयत्न करते हैं। जो गुलामी को ईश्वर प्रदत्त मानते हैं उन पर हर समझदार व्यक्ति को तरस आयेगा। भारत में बुद्धि के ठेकेदार ब्राह्मणों ने अपने विवेकहीनता का परिचय मानव मानव की बराबरी के सिद्धान्त के विपरीत पुनर्जन्म और भाग्यवाद के जरिये दिया है। इंसान-इंसान में बराबरी नहीं हो सकती और न ही होनी चाहिये यह प्रतिपादन ब्राह्मणवाद का सार है। यही कारण है कि विवेकहीन ब्राह्मणवाद के समर्थक विवेक शून्य होते गये और अन्त में उन्हें गुलामी की शरण में जाना पड़ा जहाँ उनके आका लोग सोचकर उन्हें चलाते रहे। उनके पास सोचने विचारने की ताकत होती तो गुलाम ही क्यों होते।

कहना न होगा कि इस अवनतिकारक ब्राह्मणवाद का सबसे प्रबल प्रचारक ग्रंथ हिन्दी में पंडित तुलसीदास का रामचरित मानस है जिसे प्राय: लोग रामायण कहते हैं। इस समय भारत में इस ग्रंथ का सबसे अधिक प्रचार करने के उद्देश्य से इसकी करोड़ों प्रतियां मुफ्त में जनता के बीच में बांटी जा चुकी है। इस ग्रंथ में दशरथ के पुत्र राम का चरित्र चित्रण करना अभिप्रेत नहीं जान पड़ता। वास्तव में यह ग्रंथ ब्राह्मणों की महिमा बढ़ाने और कायम रखने के लिये लिखा गया है। इसको चार सौ वर्ष से अधिक हो जायेंगे। लेकिन वैज्ञानिक ज्ञान की बढ़ोत्तरी के कारण दिनों दिन ब्राह्मणवाद का नाश होता देखकर इस ब्राह्मणवाद का प्रबल प्रचार ब्राह्मण वर्ग द्वारा किया जा रहा है। भारत के सभी नेता यद्यपि भारत के संविधान की रक्षा करने की कसम खाते हैं। लेकिन सारा ग्रंथ भारत का संविधान के विपरीत होने पर उसे संरक्षण देना उचित समझते हैं।

इससे स्पष्ट है कि करोड़ों अर्जकों की दरिद्रता दूर करने के लिये नेताओं के पास कोई कार्यक्रम नहीं, लेकिन ब्राह्मणशाही को कायम रखने के लिये अर्जकों की गाढ़ी कमाई से करोड़ों देने में कोई संकोच नहीं करते। बुद्धिमानी का ठेका ब्राह्मणों को देकर देश ने गुलामी का वरण किया। अब राज्य और धन का भी ठेका उन्हीं के हाथ देकर खैर मनाने वालों की अकल पर तरस आये बिना नहीं रह सकता। जिस ब्राह्मणवाद और गुलामी का चोली दामन का साथ रहा हो उसको कायम रखने वालों के खिलाफ हर मानववादी व्यक्ति को खड़ा होना है, तभी ब्राह्मणवाद का अंत हो सकेगा। ब्राह्मणवाद को पनपाने वालों के हाथ ताकत देना बंदर के हाथ मशाल देने से कम खतरनाक नहीं है। इस पुस्तक में इन बातों पर प्रकाश डाला गया है।

यदि पुस्तक से अर्जकों में चेतना जगी और उन्होंने संगठित होकर रामचरित मानस का डटकर विरोध किया तो मैं अपने प्रयास को सफल समझूंगा।

-रामस्वरूप वर्मा

संविधान विरोधी ग्रन्थ राम चरित मानस के चतुष्शताब्दी समारोह समिति के संरक्षक, भारत के राष्ट्रपति महामहिम वी० वी० गिरि को 18 जून 1970 को

मा० वर्मा जी द्वारा लिखा पत्र

प्रेषक :

रामस्वरूप वर्मा
एम.एल.ए.
लखनऊ

सेवा में,

श्री वी० वी० गिरि
महामहिम राष्ट्रपति
राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली

मान्यवर,

तुलसी चतुष्शताब्दी मनाने का आयोजन देश में किया जा रहा है। सुना है कि आप उक्त आयोजन के संरक्षक हैं और भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी उक्त समारोह समिति की अध्यक्ष बनने जा रही हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि आप पंडित तुलसी दास को भारत राष्ट्र का परम हितकारी मान रहे हैं, तभी तो आप तुलसी चतुष्शती समारोह के संरक्षक बने। यह भी नहीं कहा जा सकता है कि आपने पंडित तुलसी दास के राम चरित मानस का अध्ययन नहीं किया जो उनका प्रमुख ग्रंथ है। भारत के संविधान को आप अमली जामा पहनाने की शपथ ले चुके हैं। यही नहीं राष्ट्रपति के चुनाव के दौरान जब आप लखनऊ आये थे और उत्तर प्रदेश 'गिरि जिताओ समिति' का संयोजक होने के नाते आपने मेरे सभापतित्व में बुलाई गयी विधायकों की बैठक को दारूल शफा ए-ब्लाक के कामनरूम में संबोधित किया था तब भी आपने यही कहा था कि आप जीतने पर भारत के संविधान की मर्यादा प्राणपण से कायम रखेंगे।

भारत का संविधान धर्म निरपेक्ष है, उसमें भारत के प्रत्येक नागरिक को कई मौलिक अधिकार दिये गये हैं। संक्षेप में भारत का सविंधान मानव-मानव की बराबरी के सिद्धान्त को स्वीकार करता है और स्त्री पुरुष, ब्राह्मण, म्लेच्छ हिन्दू जैसे अमानवीय अंतर की कल्पना भी नहीं करता। तब फिर भी आपने उपर्युक्त अमानवीय अंतर के प्रतिष्ठापक पण्डित तुलसी दास की चौथी शताब्दी मनाने को संरक्षण दिया? क्या यह कार्य संविधान की मर्यादा का उल्लंघन नहीं है? क्या इससे देश के विशाल बहुमत को भारी ठेस नहीं लगती?

पंडित तुलसीदास के ग्रंथों में पुनर्जन्म और भाग्यवाद का ही प्रतिपादन मिलता है। पुनर्जन्म और भाग्यवाद से मानव-मानव में ऊँच-नीच और छुआछूत की भावना अनिवार्य रूप से पनपती है। छुआछूत की भावना को संविधान अनुचित करार देता

है और देश का कानून अस्पृश्यता को जुर्म करार देता है। लेकिन पंडित तुलसी दास की पुस्तक रामचरित मानस में केवट या मल्लाह को अस्पृश्य कहा गया है-

लोक बेद सबही विधि नीचा। जासु छांह छुइ लेइअ सींचा।।

अर्थात् केवट लोक और वेद में सभी प्रकार से नीच है और उसे छूकर आचमन करना चाहिये। इस प्रकार जाति विशेष को सब प्रकार से नीचे और अस्पृश्य घोषित करने वाले ग्रंथ के लेखक का सम्मान क्या भारत के संविधान का अपमान नहीं है।

आज भारत का संविधान किसी जाति को अधम या पापी कहना जुर्म मानता है। पंडित तुलसी दास ने अपने रामचरित मानस में कई जातियों को अधम और पापी कहा है-

जे वर्णाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा।।
आभीर, यवन, किरात, खस, स्वपचादि अति अघरूप जे।

अर्थात् तेली, कुम्हार, भंगी, बहेलिया, कोल, कलवार, अधम वर्ण के लोग हैं, ये पापी कौमें हैं। क्योंकि अहीर, मुसलमान, बहेलिया, खटिक भंगी आदि को पापी कौम बताया गया है जिसमें किरात और श्वपच उभयनिष्ट हैं। इससे अधम वर्ण और पापी कौमें एक ही अर्थ में प्रयुक्त हुई प्रतीत होती हैं। एक ओर 'भारत का संविधान' भारत के सभी नागरिकों को समान माने और इसे अमल में लाने के लिये आप चुने गये हो, दूसरी ओर राम चरित मानस, आप उसे सम्मान प्रदान करने के लिये संरक्षण दें जो देश के करोड़ों लोगों को अधम, नीच, पापी, अस्पृश्य कहे तो इस अन्तर्विरोध का शमन होना असंभव ही कहा जायेगा।

इतना ही नहीं भारत का संविधान सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े लोगों की दशा सुधारने के लिये राष्ट्रपति पर विशेष जिम्मेदारी डालता है कि वे एक आयोग नियुक्त कर उनकी उन्नति के सुझावों को प्राप्त करें और उन्हें अमल में लाकर उनकी उन्नति करें। कहना न होगा कि सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े लोग भारत में शूद्र की संज्ञा से भी पुकारे जाते हैं जिन्हें पण्डित तुलसीदास ने अपने रामचरित मानस में पशुओं या निर्जीव की कोटि में रखते हुये सुझाव दिया है।

ढोल गंवार शूद्र पशु नारी। ये सब ताड़न के अधिकारी।।

यानी कहां ढोल और पशु और कहाँ शूद्र और नारी इनको समान कोटि में रखकर अकारण पिटाई करने का अधिकार सवर्णों के हाथ में देना किस संविधान की मर्यादा का पालन हो सकता है? एक ओर शूद्रों को ढोल और नारी को पशु के बराबर कहकर उनकी अकारण पिटाई का फतवा दें और रामचरित मानस में राम के मुख से कहलायें-

सुनु गन्धर्व कहौं मैं तोही। मोहि न सोहाय ब्रह्म कुल द्रोही।।
सापत ताड़त परुष कहंता। बिप्र पूज्य अस गावहिं सन्ता।।

अर्थात् भगवान को ब्राह्मण कुल का द्रोह खलता है और उनका कहना है कि ब्राह्मण चाहे शाप दे, मारे या गाली दे फिर भी उनकी पूजा ही की जानी चाहिये। शूद्र और स्त्री को तो अपनी मौज या गुस्सा उतारने के लिये जब चाहो तब पीटो लेकिन बदतमीज और कानूनी अपराध करने वाले ब्राह्मण की पूजा करो। क्या ऐसे ग्रंथ के पढ़ने से या ऐसे ग्रंथ के लेखक की प्रतिष्ठा करने से देश की स्त्रियों, शूद्रों, दलितों और मुसलमानों को गहरी ठेस नहीं लगेगी? अवश्य लगेगी और तब और भी अधिक लगेगी जब यह कार्य भारत के संविधान का कार्यान्वयन कराने वाले राष्ट्रपति के संरक्षण में हो।

पंडित तुलसी दास शूद्र को शिक्षा देना ऐसा ही समझते हैं जैसे सांप को दूध पिलाना। यानी शूद्र साँप है और शिक्षा दूध। जनश्रुति के अनुसार साँप को दूध पिलाने से वह अधिक विषैला हो जाता है। उसी प्रकार पंडित तुलसीदास के अनुसार शूद्र विद्या पाने से अधिक खतरनाक हो जाता है। रामचरित मानस के काकभुसुंडि-गरुड़ संवाद में काकभुसुंडि पूर्वजन्म में शूद्र होने की बात कहते हुये कहता है-

अधम जाति मं विद्या पाये। भयउं जथा अहि दूध पिआये।।

भारत का संविधान अनिवार्य शिक्षा लागू करने का संकल्प लेता है और पंडित तुलसीदास शूद्र को विद्या पढ़ाना खतरनाक बताते हैं। दोनों का मेल कैसे बैठेगा?

सरकारी नौकरियों में, अदालत या अन्य किसी सार्वजनिक स्थान या कार्य में जाति, लिंग धर्म आदि के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जायेगा ऐसा 'भारत का संविधान' कहता है किन्तु पंडित तुलसीदास अपने रामचरित मानस में यह व्यवस्था देते हैं कि

पूजिय विप्र सकल गुण हीना। शूद्र न गुणगण ज्ञान प्रवीना।।

अर्थात् सारे गुणों से रहित होने पर भी ब्राह्मण की पूजा करो और अनेक गुण से युक्त ज्ञानी और प्रवीण शूद्र की कभी भी पूजा मत करो। तब फिर नौकरियों के चुनाव में लोग कैसे निष्पक्षता रख सकेंगे और कैसे संविधान की मंशा पूरी की जा सकेगी? भारत का संविधान तो गिरे हुये लोगों को उठाने का निर्देश करता है और पंडित तुलसीदास का महाग्रंथ उनको अकारण पीटने, अपढ़ रखने और तिरस्कार करने का फतवा देता है। नारी को पशु की श्रेणी में रखकर गुस्सा आने पर उसकी पिटाई करने का फतवा ऊपर पंडित तुलसीदास दे ही चुके हैं। वे नारी स्वतंत्रता के भी प्रबल विरोधी हैं।

महावृष्टि चलि फूटि किआरी। जिमि स्वतंत्र होइ विगरहि नारी।।

जैसे अत्यंत वर्षा से खेतों की मेड़ें फूट जाती हैं ऐसे ही स्वतंत्र होकर स्त्री भी बिगड़ जाती है। भारत का संविधान लिंग के आधार पर कोई भेद करने को तैयार नहीं। यदि पुरुष स्वतंत्र रह सकता है तो स्त्री क्यों स्वतंत्र नहीं रह सकती? परन्तु

तुलसीदास ने रामचरित मानस में राम के मुख से उपर्युक्त फतवा दिलाकर नारी की स्वतंत्रता समाप्त करने की राह बनायी।

राखिअ नारि जदपि उर माहीं। जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं।।

ऐसे स्त्री जाति के प्रति संशय की भावना पनपाई और अन्त में यहाँ तक कह दिया कि-

एक मूल बहु शूल प्रद, प्रमदा सब दुख खानि।

यानी नारी अनेक दुखों को देने का एक मात्र मूल कारण है। क्या इससे देश की करोड़ों नारियों का अपमान नहीं हुआ? क्या इससे करोड़ों नारियों के मन में ग्लानि नहीं होगी? क्या करोड़ों नारियों के आत्मसम्मान को इससे गहरा आघात नहीं लगेगा?

उपर्युक्त चन्द उदाहरणों से यद्यपि पंडित तुलसीदास की 'भारत का संविधान' विरोधी विषमता मूलक प्रवृत्ति का भलीभांति परिचय देना शायद संभव न हो। लेकिन आपके व्यस्त समय को ध्यान में रखकर पत्र का कलेवर बढ़ाना भी ठीक नहीं प्रतीत हुआ। अतः इन उदाहरणों को बटलोई के चावल की भांति परखने के लिये पर्याप्त मानकर मैं आपसे सविनय एवं साग्रह यही निवेदन करूंगा कि आप तुलसी चतुष्शती समारोह की संरक्षकता से अपने को तत्काल विलग करके इसकी घोषणा कर दें और अपने प्रधानमंत्री को भी भाग लेने से कतई मना कर दें। यद्यपि मैं उनको भारत के करोड़ों अर्जकों की ओर से पत्र लिख रहा हूँ तथापित आप उन्हें भाग लेने से अवश्य विरत कर दें तथा राजकीय कोष की गाढ़ी कमाई का एक पैसा भी उक्त समारोह के लिये न दें। हो सकता है कि ब्राह्मणों को गौरव दिलाने के लिये भागीरथ प्रयत्न करने वाले पंडित तुलसीदास की चतुष्शती समारोह का संरक्षक आपको ब्राह्मण होने के कारण बनाया गया हो ताकि आप उनके प्रयास के लिये अपना आभार प्रकट कर सकें। किन्तु यह आपके महिमामय पद के सर्वथा विपरीत होगा और जिन्होंने आपको वर्ग विहीन समाज के निर्माण का प्रयास करने वाला समझ कर राष्ट्रपति बनाने में मत दिया था उनको महान क्लेश एवं क्षोभ होगा।

आशा है आप अपने समर्थकों के लिये अकारण ऐसा क्लेश एवं क्षोभ न आने देंगे और भारत के राष्ट्रपति के पद के अनुरूप आचरण कर पद को गौरवान्वित करेंगे।

आपका : रामस्वरूप वर्मा
बंगला नं. 3 दारुल शफा
लखनऊ (उ०प्र०)

संविधान विरोधी ग्रन्थ राम चरित मानस के चतुष्शताब्दी समारोह समिति की अध्यक्ष श्रीमती इन्दिरा गाँधी प्रधानमंत्री भारत सरकार को 27 जून 1970 को

वर्मा जी द्वारा लिखा पत्र

सेवा में
माननीया श्रीमती इन्दिरा गाँधी
प्रधानमंत्री, नई दिल्ली

महोदया,

समाचार पत्रों से और अन्य प्रकार की खबरों से ऐसा पता चला है कि तुलसी चतुष्शती समारोह की अध्यक्षता आपने स्वीकार कर ली है। यह जानकर मुझे दुख हुआ कि आपने भारत के संविधान के प्रति निष्ठा की शपथ लेने के बावजूद तुलसीदास जैसे साम्प्रदायिक व्यक्ति के चतुष्शती समारोह की अध्यक्षता स्वीकार कर ली है। धर्म में तो मानव मात्र की बराबरी का सिद्धान्त निहित रहता है जिसमें मानव विवेक बुद्धि ही उसकी धारणा और समृद्धि की निर्णायक होती है।

धर्म, मानव बराबरी और मानव रक्षा के दो पलड़ों को तौलने वाली डंडी के समान है। जब किसी धर्म की आड़ में कुछ लोग एक प्रकार के कर्मकाण्ड को ही मानव धर्म का रूप देने की हिमाकत करते हैं तो उसे साम्प्रदायिकता के नाम से पुकारते हैं। आप साम्प्रदायिकता को बुरा समझती है। ऐसा आपने अनेक बार कहा है। केन्द्रीय सरकार आपके नेतृत्व में ऐसी कार्यवाही ही करने के लिये तत्पर रही है। जिससे देश में साम्प्रदायिकता का नाश हो। इस मानी में मुल्क का हरेक समझदार आदमी आपके दावे का समर्थन करेगा। लेकिन दावे बिना अमल के बेमानी होते हैं और उससे मुल्क को या व्यक्ति को कोई लाभ नहीं होता।

पंडित तुलसीदास की चतुष्शती समारोह मनाने में आपकी शिरकत इसलिये तो नहीं है कि आपने भी एक ब्राह्मण परिवार में जन्म लिया और पंडित तुलसीदास भी ब्राह्मण थे। अतः भारत में प्रायः मनाये जाने वाले विरादरी के जलसों की भांति यह भी एक बिरादरी का जलसा आपने मान लिया है। मेरी समझ में आप इसे स्वीकार करें भी तो आपके लिये यह शोभनीय नहीं होगा क्योंकि आप धर्मनिरपेक्ष भारतीय गणतंत्र की प्रधानमंत्री है और पंडित तुलसीदास ब्राह्मणवाद के प्रबल पोषक और तथाकथित सनातन धर्म के प्रबल प्रचारक थे। अतः भारत की प्रधानमंत्री रह कर आप पंडित तुलसी दास की चतुष्शती में सम्मिलित नहीं हो

सकती क्योंकि पंडित तुलसीदास ने अपने रामचरित मानस में शूद्रों अन्त्यजों, यवनों को अत्यन्त पापी और नीच बताकर भारत की बहुसंख्यक जनता का दारूण अपमान किया है। यद्यपि आपने पंडित तुलसीदास के प्रमुख ग्रंथ रामचरित मानस जिसे लोग प्रायः रामायण कहते हैं का अध्ययन किया होगा। फिर भी उक्त ग्रंथ के वे अंश जो भारत की बहुसंख्यक जनता के मन पर गहरी चोट करते हैं, आप अवश्य छोड़ गयी हैं। तुलसीदास सनातन धर्मी वैष्णव थे और उसी सम्प्रदाय का प्रचार उन्होंने अपने ग्रंथ के जरिये किया। इतना ही नहीं अपने से इतर धर्मावलम्बियों को अधम या पापी कहा तथा शूद्र और स्त्री को नींच और अधम कहा। ऐसा कवि राष्ट्र हितकारी कैसे हो सकता है और फिर आप कैसे उसके चतुष्शती समारोह में शामिल होना उचित सिद्ध कर सकती हैं?

आप नारी हैं। स्वभावतः आपके दिल में उनके दुख सुख को समझने की अधिक क्षमता है। पण्डित तुलसीदास ने अपने ग्रंथों में नारी निन्दा की झड़ी लगा दी है। सृष्टि के स्वाभाविक नियम को भी बुरा कहने में पण्डित तुलसीदास को माहिरियत प्राप्त है भले ही उससे करोड़ों माताओं के मन पर ठेस लगे।

जिमि बनिता अनुभवै प्रसव दुख पुनि खल पतिहिं भजै। (विनय पत्रिका)

जैसे स्त्री बच्चा जनने के दुख का अनुभव करने के बावजूद दुष्ट पति से वैसा ही संबंध रखती है जिससे उसे बार-बार प्रसव का दुख झेलना पड़ता है। क्या इससे करोड़ों नारियों के मन पर चोट नहीं लगती? क्या यह बात किसी राष्ट्रीय कवि के कथन योग्य है।

पण्डित तुलसीदास ने स्त्री को धर्म के गूढ़ विषय को जानने के अयोग्य बताया है और यह बात पार्वती के मुंह से स्वयं कहलाई है-

जदपि जोषिता नहिं अधिकारी। दासी मन क्रम बचन तुम्हारी।।
अब मोहि आपनि किंकरि जानी। जदपि सहज जड़ नारि अयानी।।

अर्थात् यद्यपि स्त्री तत्व जानने की अधिकारी नहीं है क्योंकि वह स्वभाव से ही मूर्ख और अज्ञानी होती है। किन्तु मैं आपकी मन वचन और कर्म से दासी हूँ इसलिये आप इस तत्व को बता दें।

स्त्री को अत्यन्त कामुक चित्रित करने से भी पण्डित तुलसीदास नहीं चूके।

यथा- भ्राता पिता पुत्र उरगारी। पुरुष मनोहर निरखत नारी।।
होहिं विकल सक मनहिं न रोकी। जिमि रविमणिं द्रव रविहिं बिलोकी।

अर्थात् भाई पिता पुत्र कोई भी पुरुष हो स्त्री तो उसमें मनोहरता देखती है। और मनोहर पुरुष पाने पर इतनी व्याकुल हो जाती है कि फिर वह मन को ऐसे ही नहीं रोक पाती है जैसे सूर्य को देखकर सूर्यमणि अपने आप रसने लगती है। यद्यपि

पण्डित तुलसीदास यह जानते रहे होंगे कि बलात्कार तो पुरुष ही करते हैं फिर स्त्री के साथ सारी कामुकता का दोष मढ़ना कहां की निष्पक्षता है।

सत्य कहिहिं कवि नारि स्वभाऊ। सब विधि अगम अगाध दुराऊ।।
निज प्रतिबिम्ब मुकुर गहि जाई। जानि न जाय नारि गति भाई।।
विधिहु न नारि हृदय गति जानी। सकल कपट अघ अवगुन खानी।।

अर्थात् कवि लोग सच ही कहते हैं कि स्त्री का स्वभाव सब प्रकार से अगम, अथाह और विस्तृत हैं। चाहे कोई अपनी छाया शीशे में पकड़ लें लेकिन स्त्री की चाल की जानकारी करना फिर भी असंभव है। ब्रह्म ने भी स्त्री के हृदय की गति नहीं जान पाई क्योंकि वह सारे कपट, पाप अवगुण की खान है इतना कहने के बाद यह भी कहा कि स्त्रियों के मन में आठ अवगुण सदैव रहते हैं यानी साहस झूठ बोलना, चपलता, हिपोक्रेसी, भय, अविवेक अशुद्धता और निर्दयता-

नारि स्वभाव सत्य कवि कहहीं। अवगुण आठ सदा उर रहहीं।।
साहस अनृत चपलता माया। भय अविवेक असौच अदाया।।

राम चरित मानस के नायक श्री राम के मुंह से नारी को अनेक शूलप्रद और सब दुखों की खानि का मूल कारण कहलवाया है। और उसे दूर रखने को कहा है वही राम यहाँ तक कह देते हैं कि स्त्री को चाहे हृदय में क्यों न रखो लेकिन युवती शास्त्र और राजा कभी वश में नहीं होते।

एक मूल बहु शूलप्रद, प्रमदा सब दुख खानि।
राखिय नारि जदपि उर माहीं। जुबती शास्त्र नृपति वस नाहीं।।

इसलिये पडिण्त तुलसी दास ने अन्त में अपने राम चरित मानस में राम से यह भी कहलवा दिया कि स्वतंत्र होने से स्त्रियाँ बिगड़ जाती हैं-

महावृष्टि चल फूट कियारी। जिमि स्वतंत्र होइ बिगरहिं नारी।।

स्त्री द्रोही पण्डित तुलसीदास के मन में इतना द्वेष था कि उन्होंने अन्त में स्त्री को पशु व ढोल के समान घोषित कर दिया और फतवा दे दिया कि इनकी पिटाई होती रहनी चाहिये।

ढोल गंवार शूद्र पशु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।।

उपर्युक्त चौपाई में शूद्र के लिये भी पिटाई का विधान पंडित तुलसीदास ने अपने प्रमुख ग्रंथ राम चरित मानस में किया है। भारत का संविधान लिंग के आधार पर कोई भेद करने से रोकता है किन्तु पण्डित तुलसीदास उसे सारे दुखों की जड़ कपटी, पापी बताते हैं। क्या कोई जज पण्डित तुलसीदास के उपर्युक्त वाक्यों का स्मरण करते हुये किसी स्त्री को निष्पक्ष न्याय दे सकता है? तब इस संविधान विरोधी नारी निंदक एवं पक्षपाती पण्डित तुलसीदास की चतुष्शती मनाना कहाँ तक भारत का संविधान की इच्छा के अनुकूल होगा?

एक ओर भारत का संविधान अनिवार्य शिक्षा का श्रेयस्कर सिद्धान्त कार्यान्वित करने का संकल्प दे और दूसरी ओर पण्डित तुलसीदास की राम चरित मानस की निम्नांकित चौपाई शूद्रों के लिये विद्या प्राप्त करना विषैला बतायें तो फिर संविधान के प्रति निष्ठा की शपथ लेने वाले को यही निर्णय करना होगा कि वह संविधान विरोधी पण्डित तुलसीदास को छोड़ दे-

अधम जाति मैं विद्या पाये। भयउँ यथा अहि दूध पियाये।।

अनेक जातियों को, मुसलमानों को पापी कौमें बताना किस राष्ट्रीयता का पोषक हो सकता है यथा-

जे वर्णाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा।।
आभीर यवन किरात खस, स्वपचादि अति अधरूप जे।।

स्पष्ट है कि पंडित तुलसीदास घोर साम्प्रदायिक और जातीयता के पोषक थे क्योंकि जहाँ ऊपर उन्होंने अनेक जातियों को अधर्मी और पापी कहा वहीं ब्राह्मणों को परम पूज्य और शाप देने, मारने और गाली देने पर भी पूजने को कहा यथा-

पूजिय विप्र सील गुण हीना। शूद्र न गुणगन ज्ञान प्रवीना।।
शापत ताड़त परुष कहन्ता। विप्र पूज्य अस गावहिं सन्ता।।
पुन्य एक जग महुं नहि दूजा। मन क्रम वचन विप्र पद पूजा।।
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा। जो तजि कपटु करइ द्विज सेवा।।
मंगल मूल विप्र परितोषू। दहइ कोटिकुल भूसुर रोषू।।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि पण्डित तुलसीदास ने ब्राह्मणों के रोष से करोड़ों कुलों के नाश की धमकी देकर और उनकी सेवा से सभी देवताओं की अनुकूलता की गारण्टी करके न केवल मुसलमानों के वरन् करोड़ों हिन्दुओं को भी संकट पैदा कर दिया है। विवेक से उनका कोई वास्ता नहीं। वे तो बुद्धि का इस्तेमाल ही बेकार समझते हैं यहां तक कि आप शिव की अन्ध भक्ति की सलाह देते हैं और इस संबंध में हिंसा को भी प्रोत्साहन देते हैं यथा-

हरिहर निन्दा सुनिय जो काना। पाप होय गो घात समाना।।
काटिअ तासु जीभ जो बसाई। श्रवण मूदि न त चलिअ पराई।।

इसी असहिष्णुता का नाम साम्प्रदायिकता है।

अतः मेरा आप से नम्र निवेदन है कि आप तुलसी चतुष्शती समारोह से अपना नाता तोड़ लें। सरकारी खजाने से एक पैसा या कोई सुविधा उक्त आयोजन के लिये न देने और यथा संभव पण्डित तुलसीदास की चतुष्शती मनाने से लोगों को हतोत्साहित करें। आशा है कि आप निर्णय से शीघ्र अवगत कराने का कष्ट करेंगी।

कष्ट के लिये धन्यवाद। आपका :

रामस्वरूप वर्मा एम.एल.ए.
बंगला नं०3, दारूल शफा, लखनऊ (उ.प्र.)

संविधान विरोधी ग्रन्थ राम चरित मानस के चतुष्शताब्दी समारोह समिति के संरक्षक भारत के राष्ट्रपति महामहिम वी० वी० गिरि को 06 अगस्त 1970 को

मा० वर्मा जी द्वारा लिखा पत्र

प्रेषक : रामस्वरूप वर्मा (एम०एल०ए०),
बंगला नं०-3, दारूल शफा, लखनऊ

सेवा में, महामहिम राष्ट्रपति, राष्ट्रपति भवन,
नई दिल्ली

महानुभाव,

मैंने 18 जून, 1970 को आपके पास एक पत्र भेजा और देश के करोड़ों अर्जकों के मन पर चोट करने वाले तुलसी कृत रामचरित मानस चतुष्शती समारोह को संरक्षण न देने की आप से विनम्र प्रार्थना की थी। मैंने आपसे उस पत्र में यह भी आग्रह किया था कि उक्त समारोह की अध्यक्षता करने से अपने प्रधानमंत्री को भी रोकें और एक भी पैसा सरकारी धन का उक्त रामचरित मानस के चतुष्शती समारोह में न लगने दें। इसका कारण रामचरित मानस का संविधान विरोधी होना बताया था। तुलसीदास कृत रामचरित मानस से दिये गये पुष्ट प्रमाणों के आधार पर ही मैंने उक्त निवेदन किया था। किन्तु खेद है कि आपने अब तक उक्त पत्र का उत्तर नहीं दिया। पत्र प्राप्ति की स्वीकृति अवश्य आई किन्तु उससे तो कोई तात्पर्य निकलता ही नहीं है। अतः यह दूसरा पत्र भेजना पड़ रहा है। रामचरित मानस का चतुष्शताब्दी समारोह केवल ब्राहाणवाद का प्रचार है। और ब्राह्मणवाद का स्वरूप पूर्णतया साम्प्रदायिकता को उभारने वाला रामचरित मानस में दिया गया है। इतना तो पिछले पत्र से ही स्पष्ट है कि पंडित तुलसीदास न तो राष्ट्रीय कवि थे और न उनकी पुस्तक रामचरित मानस राष्ट्रीयता का ग्रंथ है। इसके विपरीत रामचरिम मानस 'भारत का संविधान' विरोधी ग्रंथ अवश्य है। ऐसी स्थिति में आपका या आपके प्रधानमंत्री या अन्य किसी मंत्री का समरोह में भाग लेना 'भारत का संविधान' का उल्लंघन होगा। 'भारत का संविधान' के प्रति निष्ठावान रहने की कसम आपने और मंत्रियों ने खाई है। अतः आपके लिये किसी प्रकार भी ऐसे ग्रन्थ की प्रतिष्ठा में किए गए आयोजन में सम्मिलित होना अनुचित होगा जो राष्ट्रीयता और 'भारत का संविधान' के विपरीत विचार का प्रचारक हो। आपने उस पत्र को पढ़ा अवश्य होगा। शायद

आपके मन में परम्परा से व्याप्त विचारों के कारण निर्णय लेने में कुछ हिचक हो। इसलिये मैं रामचरित मानस के संबंध में और अधिक जानकारी करा देना उचित समझता हूँ ताकि आपको तुरंत निर्णय लेने में सुविधा रहे।

पं० तुलसीदास ने रामचरित मानस की रचना किसी राष्ट्र के निर्माण के लिए या मानवता का सन्देश देने के लिये नहीं की। उनका उद्देश्य केवल यही था कि इस रचना में उन्हें यानी उनकी जाति को सुख मिले। 'स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा भाषा निबंध मति मंजुलमातनोति' से यही स्पष्ट है कि अपनी जाति को सुख देने के लिये उन्होंने इसे अत्यंत सुन्दर प्रबंध के रूप में प्रचलित भाषा में लिखा। तुलसीदास के रामचरित मानस में एक व्यक्ति सारी जाति की ओर से बोलता है जैसे निषाद अपनी सारी कौम को कुजाति यानी नीच कहता है-

कपटी कायर कुमति कुजाती। लोक वेद बाहर सब भाँति।।

(बालबोधनी टीका अयोध्या का० पृष्ठ 493)

मैं कपटी कायर कुबुद्धि और कुजात होकर लोक वेद से बाहर अछूत हूँ। कोई व्यक्ति अपने लिये चाहे तो कुछ कह दे लेकिन सारी कौम के लिए कहना कहाँ तक उचित है। किन्तु रामचरित मानस में ऐसे अनेक स्थल हैं। जहाँ एक शूद्र के मुख से अपनी कौम को नीच या अधम कहलवाया गया है। कहना न होगा कि रामचरित मानस भयंकर रूप से जातिवाद का पोषक ग्रंथ हैं। उसमें राम राज्य के वर्णन में सब अपने वर्ण और आश्रम के धर्म में प्रीति करते व वेद मार्ग पर चलते हैं' कहकर जातिवाद की पुष्टि की गई है-

वर्णाश्रम निज-निज धरम निरत वेद पथ लोग।

इस वर्ण व्यवस्था के चलने में तो ब्राह्मण को ही अधिक लाभ है। पंडित तुलसीदास ने इसके पालन कराने की कोशिश की है। यही नहीं पंडित तुलसीदास ने राम चरित मानस के द्वारा ब्राह्मणों को सर्वश्रेष्ठ परम आदरणीय और पूज्य कहलाने की कोशिश की है। इस काम को उन्होंने परम्परा का रूप देकर, लोभ लालच दिखाकर, भगवान या महापुरुषों के मुख से कहलाकर या धमकी के जरिये किया है। पत्र का कलेवर बढ़ने क भय से हर एक के कुछ उदाहरण देकर उपर्युक्त तथ्यों को प्रमाणित करना चाहता हूँ। पहले परम्परा का रूप देकर किस प्रकार ब्राह्मणों को श्रेष्ठ बताने की कोशिश रामचरित मानस में है उसकी बानगी नीचे देखें। सारे रामचरित मानस में महत्वपूर्ण समारोहों में ब्राह्मणों का इस प्रकार जिक्र किया गया है जैसे उसके बिना समारोह सम्पन्न हो ही नहीं सकता था। राजा मिलने जाये तो ब्राह्मणों के बिना नहीं जाता और दूसरा कोई मिलने आये तो ब्राह्मणों को लेकर मिलने जाना यही साबित करता है कि ब्राह्मण समाज का सर्वोपरि अंग है, उसमें योग्यता या आचरण का सवाल ही नहीं उठता। नीचे के कुछ उदाहरण इस सम्बन्ध में देखें-

मुनि आगमन सुना जब राजा। मिलन गयउ लै बिप्र समाजा।।

(बालबोधनी टीका बालकाण्ड में पृष्ठ 174)

तब गुरु भूसुर सहित गृह गमन कीन्ह नर नाथ।

तुलसी के अनुसार अन्य योग्य व्यक्तियों के साथ ब्राह्मणों में ही समझदारी थी। जैसे- तापस मुनि महिसुर सुनि देखी। भए प्रेम बस विकल बिसेषी।।

(आयो० का० पृष्ठ 536)

तपस्वी, मुनि और ब्राह्मण राजा जनक की यह दशा देखकर प्रेम के वश बहुत व्याकुल हुए। अन्य लोगों के हृदय कहाँ जो प्रेमवश होकर व्याकुल होते।

सभा राउ गुरु महिसुर मंत्री। भरत भगति सब कै मति जंत्री।।

(आयो० का० पृष्ठ 544)

सभा, राजा जनक, गुरु ब्राह्मण और मंत्री सबकी बुद्धि को भरत ने बाँध दिया। सामान्य जनों का पहुँचाना सभा में हो ही नहीं सकता था फिर उनके बुद्धि कहाँ! हाँ ब्राह्मण ही थे।

मुनि महिसुर गुरु भरत भुआलू। राम विरहँ सबु साजु बिहालू।।

(आयो० का० पृष्ठ 559)

इधर मुनि, ब्राह्मण, वशिष्ट, भरत और जनक राम के वियोग में बेहाल हैं। बाकी जो लोग भूखे प्यासे राम दरस के लिये गए थे वे अधम जाति के लोग संवेदनशील कहाँ से हो सकते थे। स्पष्ट है कि पंडित तुलसीदास यह साबित करना चाहते थे कि ब्राह्मण हर बड़ी सभा या निर्णय में मौजूद रहते थे इसी से उनकी श्रेष्ठता सिद्ध है। राज तिलक उन्हीं की आज्ञा से होता था जैसे-

सब द्विज देहु हरष अनुशासन। रामचन्द्र बैठहि सिंहासन।।

(आयो० का० पृष्ठ 940)

इतना ही नहीं ब्राह्मणों को जो दिया जाता था वह दान था बाकी लोगों को जो दिया जाता था भीख थी क्योंकि ब्राह्मणों को अनचाहे दिया जाता था और बाकी लोगों को मांगने पर मिलता था। जैसे-

हाटक धेनु वसन मणिनृप विप्रन कहँ दीन्ह। (बाल का०पृष्ठ 303)

बारात वापस आने पर कौशल्या ने ब्राह्मणों को बहुत दान दिया और गणेश व शिव की पूजा की। वन जाते समय भले ही लोग दुःखी हों परन्तु राम ने गुरू से कह कर वर्ष भर के लिये खाने को ब्राह्मणों को दिया और तब उसे उन्होंने शौक से ले लिया।

गुरु सन कहिंह बरासन दीन्हें। आदर दान विनय वश कीन्हें।।

(बाल का०पृष्ठ 379)

वन से वापस आने पर भरत ऐसा नीतिवान राजा भी ब्राह्मणों को बुलवाकर कहता है-

भूसुर बोलि भरत कर जोरे। करि प्रनाम बड़ बिनय निहोरे।
ऊँच-नीच कारज भल पोचू। आयसु देंय न करब संकोचू।।

(अयो० का० 559)

ब्राह्मणों को बुलाकर हाथ जोड़कर भरत जी ने प्रणाम किया और विनय के साथ कहा कि ऊँच-नीच भला बुरा जो कुछ भी काम हो उसकी आज्ञा देने में संकोच न कीजिए। आप ही समझें कि ब्राह्मणों की इतनी महत्ता कि भरत ऐसा न्यायशील राजा भी ब्राह्मणों के ऊँच नीच और भले बुरे आदेशों का पालन करने को तैयार था। फिर भरत को न्यायशील कैसे कहा जाय, या फिर ब्राह्मणों की श्रेष्ठता प्रमाणित करने का कुचक्र कहा जाय।

भोजन कहं सब विप्र बुलाए। पद पखारि आसन बैठाये।। (बा. का. 147)
विप्र वृन्द सब सादर बन्दे। जानि भाग्य बड़ राउ अनंदे।। (बा. का. 195)
भूसुर भीर देखि सब रानी। सादर उठीं भाग्य बड़ जानी।।
पाय पखारि सकल अन्हवाए। पूजि भली विधि भूप जवाए।। (बा.का. 307)

जब राजा और रानी ब्राह्मणों के पैर धोते और नहलाते थे तो फिर सामान्य आदमी की बिसात ही क्या है, यह उपर्युक्त चौपाई से स्पष्ट है।

बेचारे रामचन्द्र जी तो कदम-कदम पर सोते जागते ब्राह्मणों के चरणों का ही ध्यान किया करते थे। यथा-

सुमिरि शम्भु गुरु विप्रपद, किए नीद वश नैन।
वन्दि विप्र सुर गुरु पितुमाता। पाइ अशीष मुदित सब भ्राता।। (बा.का. 312)
अस कहि रथ रघुनाथ चलावा। विप्र चरण पंकज सिर नावा।। (ल.का. 812)
सकल द्विजन्ह कहं नायउ माथा। धर्म धुरंधर रघुकुल नाथा।। (उ.का. 924)

ब्राह्मणों की सेवा से देवता भी प्रसन्न होते हैं, राम को भक्ति प्राप्त होती है और सभी मंगल और सुख मिलते हैं। जैसे-

शीतलता, सरलता, मयत्री। द्विजपद भक्ति धर्म जनयंत्री।। (उ.का. 964)

वे समझते हैं कि शीतलता, सिधाई, मित्रता तथा ब्राह्मणों के चरणों की प्रीति से धर्म की उत्पत्ति होती है।

पुन्य एक जग महु नहिं दूजा। मन क्रम वचन बिप्र पद पूजा।।
सानुकूल तेहि पर सब देवा। जो तजि कपटु करइ द्विज सेवा।। (उ. का. 970)

उपर्युक्त फतवा राम देते हैं-

धन्य घरी सो जो सतसंगा। जन्म धन्य द्विज भक्ति अभंगा।। (उ.का. 1047)

यह घड़ी धन्य है जब सतसंग हो।
वह जन्म धन्य है जिसमें ब्राह्मणों में पूरी भक्ति हो।

सुनु मम वचन सत्य अब भाई। हरितोषन बत द्विज सेवकाई।। (उ.का. 1024)

भाई मेरा यह सच्चा वचन सुनकर ब्राह्मण की सेवा करना। भगवान को प्रसन्न करने का व्रत यही है। उपर्युक्त दोनों कथन शिव जी के हैं।

भगति कि साधन कहउँ बखानी। सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी।।
प्रथमहिं विप्र चरण अति प्रीति। निज-निज कर्म निरत श्रुति रीति।। (अ.का. 583)
मनक्रम वचन कपट तजि, जो कर भुसुर सेव।
मोहिं समेत विरंचि सिव, वस ताके सब देव।। (अरण्यकाण्ड पृष्ठ 612)
ते नर प्राण समान मम, जिनके द्विज पद प्रेम। (अरण्यकाण्ड पृष्ठ 693)

उपर्युक्त तीनों वचन भी रामाचन्द्र जी ने कहे हैं। ऐसे वचनों की भरमार है। उपर्युक्त बानगी के उदाहरणों से स्पष्ट है कि ब्राह्मण महिमा की पुस्तक रामचरित मानस के ब्राह्मणों की न पूजा पर तो न जाने क्या- क्या अहित हो सकता है।

यथा-भगवान राम कहते हैं-

सुनु गन्धर्व कहौं मैं तोही। मोहि न सुहाय ब्रह्म कुल द्रोही।।

वैसे रामचन्द्र जी का जन्म ही ब्राह्मण और गाय की भलाई के लिये हुआ था।

गौद्विज हितकारी जय असुरारी। सिंधु-सुता, प्रिय कन्ता।।

और अन्त में फिर भी रामचन्द्र जी अगस्त्य से यही सलाह लेने गए कि किस प्रकार द्विज दोहियों का नाश किया जाये। गाय की रक्षा की बात तो पूरी कथा में कही गयी है। अतः शुद्ध रूप में राम जन्म ब्राह्मणों के दुश्मनों का नाश करने के लिये हुआ था जैसा कि उनके काम से स्पष्ट है-

अब सौ मंत्र देउ मुनि मोही। जेहि प्रकार मारहुं मुनि द्रोही।।
द्विज द्रोही न बचहिं मुनिराई। जिमि पंकज बन हिम ऋतु पाई।। (अ. का. 518)

श्री रामचन्द्र जी अगस्य मुनि से कहते हैं, हे प्रभो! अब मुझे वह सम्मति दीजिए जिस प्रकार मैं मुनियों के द्रोही राक्षसों को मारूँ। हे मुनि राज ब्राह्मणों के बैरी वैसे ही न बचें जैसे हेमन्त ऋतु आने पर कमल के वन उजड़ जाते हैं।

मशक दंश बीते हिम त्रासा। जिमि द्विज द्रोह किए कुल नासा। (कि. का. 642)
वंश कि रह द्विज अनहित कीन्हें। (उ. का. 1021)

शिव जी कहते हैं-

अब जनि करहि विप्र अपमाना। जानेसु संत अनंत समाना।।
इन्द्र कुलिस ममशूल बिसाला। काल दण्ड हरिचक्र कराला।।
जो इन्द्र कर मारा नहिं मरई। बिप्र द्रोह पावक सो जरई।। (उ.का. 12024)

अन्त में तुलसी दास जी ने राम चरित मानस में ब्राह्मण विरोध के अनेक दुष्परिणाम विभिन्न प्रकार से कहलवाकर जब यह महसूस किया कि शायद इन धमकियों की सच्चाई पर लोगों को यकीन न आये तो ऐसी बात कही जिसका कोई जायजा इस दुनिया में ले ही न सके। अतः काक भुसुण्डि के मुख से कहलाया-

द्विज निंदक बहु नरक भोग करि। जग जनमइ वायस सरीर धरि।। (उ.का. 1042)

ब्राह्मण की निंदा करने वाला अनेक नरकों को भोगकर संसार में कौआ होता है। अब यह कैसे पता लगे कि कितने कौए पहले द्विज निंदक थे।

उपर्युक्त चन्द उदाहरणों से रामचरित मानस की कथा की मंशा व उनकी प्रवृत्ति स्पष्ट हो जाती है। इतना हो नहीं स्पष्ट रूप से ब्राह्मणों की श्रेष्ठता का गान भी पंडित तुलसीदास ने किस बेशर्मी से श्रीराम के मुख से करवाया है? राम कहते हैं-

सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सब ते अधिक मनुज मोहि भाए।।

तिन महँ द्विज द्विज महँ श्रुति धारी। तिन महुँ निगम धरम अनुसारी।। (उ.का. 1002)

यद्यपि सब मेरे उपजाए हैं परन्तु उनमें मनुष्य मुझे सबसे अच्छे लगते हैं उनमें भी ब्राह्मण, ब्राह्मणों में वेद पढ़ने वाले और उनमें भी वेद मार्ग पर चलने वाले। इसीलिए पण्डित नारद जी ने ठीक ही श्रीराम चन्द्र जी को ब्राह्मण रूपी खेती के लिये घनघोर बादल के समान कहा है।

भूसुर ससि नव वृन्द बलाहक। (उत्तर काण्ड पृष्ठ 947)

राम राज्य में सब स्त्री पुरुष दानी परोपकारी और ब्राह्मणों के सेवक हैं।

क्या आप वर्तमान 'भारत का संविधान' के अनुसार इस जाति विशेष की गुलामी को उचित करार दे सकती हैं। और ऐसा रामराज्य लोगों का आदर्श राज्य हो सकता है? इसे तो हराम राज्य कहा जाये क्योंकि-

कोटिन्ह वाजिमेध प्रभु कीन्हे। दान अनेक द्विजन्ह कहँ दीन्हे। (उ.का. 959)

श्री राम ने करोड़ो अश्वमेध यज्ञ किये और ब्राह्मणों को बेशुमार दान दिया। सारी जनता की गाढ़ी कमाई एक जाति के लोगों को मुफ्त में देना हराम राज्य नहीं तो और क्या कहा जायेगा।

पंडित तुलसीदास इस ब्राह्मण महिमा के ग्रन्थ राम रचित मानस के खिलाफ होने वाली प्रतिक्रिया भली भांति जानते थे। तभी उन्होंने काक भुसुण्डि के मुंह से कहलवा दिया कि इस कथा को ब्राह्मण के बैरी को कभी न सुनाना, चाहे वह इन्द्र सा ही राजा हो-

द्विज द्रोहिहि न सुनाइअ कबहूँ। सुरपति सरिस होय नृप जबहूँ।।

(उत्तर काण्ड पृष्ठ 1049)

इस कथा के सुनने के अधिकारी ब्राह्मणों के गुलाम है, यथा-

गुरु पद प्रीति नीति रत जेई। द्विज सेवक अधिकारी तेई।।

(उत्तर काण्ड पृष्ठ 1049)

गुरू के चरणों में जो प्रीति रखता हो, जो नीति के अनुसार चलता हो, जो ब्राह्मणों का सेवक हो वही इस कथा को सुनने का अधिकारी है।

इतना ही नहीं घोर साम्प्रदायिकता और हिंसा का प्रोत्साहन देना अवैधानिक और नियम विरूद्ध है। अपनी राय से जो राय न मिलाए उसे गाली देना जनतांत्रिक मूल्यों के सर्वथा विरूद्ध एवं निंदनीय ही कहा जायेगा। किन्तु पण्डित तुलसीदास ने अपने राम रचित मानस में अपने विरोधी मतावलम्बियों को न जाने कितना बुरा कहा है। जैसे-

जिन्ह हरि कथा सुनी नहिं काना। श्रवण रन्ध्र अहिभवन समाना।।

ते सिर कटु तुंबरि समतूला। जे न नमत हरि गुरु पद मूला।।

जिन हरिभगति हृदयँ नहिं आनी। जीवित सव समान तेइ प्रानी।।

जो नहिं करइ राम गुण गाना। जीह सो दादुर जीह समाना।।

कुलिस कठोर निठुर सोई छाती। सुनि हरि चरित न जो हरषाती।।

(बालकाण्ड पृष्ठ103)

जिन्होंने भगवान की कथा कानों से नहीं सुनी उनके कानों के छेद सर्प के बिल के समान हैं। वे सिर कड़वी तोबी के समान हैं जो भगवान और गुरु के चरणों के सामने नहीं झुकते। जो भगवान की भक्ति हृदय में नहीं लाये वे प्राणी जीते हुए भी मुर्दे के समान हैं, वह जीभ मेढक की जीभ के समान है जो राम गुणगान नहीं करती। वह निठुर छाती बज्र के समान कठोर है जो भगवान के चरित्र सुनकर प्रसन्न नहीं होती।

रामभक्ति तजि चह कल्याना। सो नर, अधम श्रृगाल समाना।।

(आ. का. 577)

राम जी की भक्ति छोड़कर जो सुख चाहे वह नीच मनुष्य सियार के समान अधम है।

मालूम पड़ता है कि इतनी गालियों से जब पण्डित तुलसीदास का पेट नहीं भरा तो उन्होंने यहां तक सती के मुंह से कहला डाला कि

संत संभु श्रीपति अपबादा। सुनिअ जहां तहं अस मरयादा।।

कटिअ तासु जीभ जो बसाई। श्रवन मूदि न त चलिअ पराई।। (बा. का. 60)

साधु, शिव और विष्णु का अपमान जहां सुन पड़े वहां की यह मार्यादा है कि अपना बस चले तो निंदा करने वालों की जीभ काट लें नहीं तो कानों में उंगली देकर वहां से हट जायें।

इस प्रकार मतविभेद के खिलाफ खुली हुई हिंसा का प्रचार करने वाली पुस्तक रामचरित मानस किस प्रकार आपके आदर की पुस्तक बन सकती है। शूद्र, स्त्रियों और अल्पसंख्यकों के लिये रामचरित मानस अपार घृणा का भंडार है। इसे इसके पूर्व के पत्र में लिखा जा चुका है। अतः यहां पुनः लिखकर आप का कीमती वक्त लेना उचित न होगा। उपर्युक्त संक्षिप्त विश्लेषण से यह पूर्णतया स्पष्ट है कि पंडित तुलसीदास पूर्णतया साम्प्रदायिक व्यक्ति थे और इन्होंने

रामचरित मानस के नाम से ब्राह्मण महिमा का ग्रंथ रचकर देश के अधिकांश निवासियों के प्रति घृणा पैदा करने में कोई कसर नहीं उठा रखी। ऐसा ग्रंथ न राष्ट्रीय है और न राष्ट्र हितकारी। अतः ऐसे ग्रन्थ का चतुष्शदी समारोह मनाना राष्ट्र हित के विरुद्ध और साम्प्रदायिकता उभारने वाला है। वास्तव में यह जातीयता से ओत-प्रोत ब्राह्मणों का अपनी मान्यता कायम रखने का प्रबल षड्यंत्र है। कोई इन चतुष्शताब्दी समारोह वालों से पूछे कि आखिर राम चरित मानस कब लिखा गया था? क्या आज इसको चार सौ वर्ष हो गये? संवत 1631 में बने ग्रंथ को किस हिसाब से संवत 2027 में चार सौ वर्ष हो गये? सबेरे आने वाली जम्हाई के लिए शाम से ही मुंह फैलाना कुटिलता अथवा मूर्खता में से एक का लक्षण अवश्य है।

अन्त में इस पत्र को समाप्त करते हुए मेरा आपसे यही निवेदन है कि इस ब्राह्मण महिमा के समारोह में आप कतई भाग न लेने की अविलंब घोषणा करें ताकि भारत के बहुजन के मन में फैली आशंका समाप्त हो जाये और साम्प्रदायिकता को प्रोत्साहन आपके द्वारा न मिले। आप अपनी प्रधानमंत्री जी को भी उक्त समारोह में किसी भी रूप में शिरकत करने से मना कर दें तथा इस नीति को समूचे देश में लागू करें। मुझे आशा है कि आप शीघ्र ही घोषणा करके ऐसी व्यवस्था करेंगे कि अर्जकों की गाढ़ी कमाई का धन इस साम्प्रदायिकता एवं हिंसा को प्रोत्साहन देने वाली पुस्तक रामचरित मानस के समारोह में कतई खर्च न हो। आशा है कि आप अपने निश्चय से शीघ्र ही अवगत कराने का कष्ट करेंगे!

आपका :

रामस्वरूप वर्मा

दिनांक : 06.08.1970 सदस्य विधान सभा, उ०प्र०

संविधान विरोधी ग्रन्थ राम चरित मानस के चतुष्शताब्दी समारोह समिति की अध्यक्ष श्रीमती इन्दिरा गांधी, प्रधानमंत्री भारत सरकार को 14 अगस्त 1970 को

वर्मा जी द्वारा लिखा गया पत्र

प्रेषक : रामस्वरूप वर्मा (एम०एल०ए०),
बंगला नं०-3, दारूल शफा, लखनऊ

सेवा में, माननीय प्रधानमंत्री,
केन्द्रीय शासन, नई दिल्ली

मैंने आपको एक पत्र 27 जून 1970 को राम चरित मानस चतुष्शताब्दी समारोह समिति की अध्यक्षता को अस्वीकार करने के लिये लिखा था। कारण यह था कि पण्डित तुलसीदास कृत रामचरित मानस न तो राष्ट्रीय ग्रन्थ है और न राष्ट्र हितकारी। उक्त ग्रंथ जातीयता का प्रबल पोषक, साम्प्रदायिकता को उभारने वाला तथा स्त्री और शूद्र निंदा का विशाल भण्डार है। मैंने आपको लिखे गये पत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया था कि रामचरित मानस के उपदेश या वर्णन 'भारत का संविधान' के विपरीत होने के कारण आपके द्वारा प्रतिष्ठा या सम्मान देने योग्य नहीं। भारत के राष्ट्रपति के नाम जो पत्र मैंने इसी संबंध में लिखा था उसका हवाला भी आपको लिखे गये मेरे पत्र में था। उक्त पत्र की पावती तो आपके निजी सचिव ने भेजी लेकिन उत्तर अब तक नहीं। किन्तु गत 10 अगस्त को समाचार पत्रों से मालूम हुआ कि आपने उक्त समारोह समिति की अध्यक्षता भी स्वीकार कर ली है और गत 1 अगस्त को दिल्ली में उक्त समारोह समिति के तत्वावधान में गठित एक सभा में आपने भावभीनी श्रद्धांजलि भी पंडित तुलसीदास को दे डाली और कहा कि रामचरित मानस को मात्र हिन्दू या भारतीय ग्रंथ मानना ठीक नहीं होगा। अर्थात् आपकी निगाह में यह विश्व ग्रंथ है। आपने यह भी कहा कि पण्डित तुलसीदास ने परस्पर सहयोग, सामाजिक न्याय तथा सद्भावना का संदेश दिया और परहित सरिस धर्म नहिं भाई' इस एक अर्द्धाली को कहकर उक्त ग्रंथ की महत्ता स्वीकार कर ली।

मुझे यह कहने में संकोच का अनुभव हो रहा है कि आपने रामचरित मानस को क्या कभी अद्योपांत पढ़ा है, क्योंकि यह बात तथ्य संबंधित है और तथ्य की जानकारी किए बगैर अनुमान पर कहना ठीक नहीं लगता। लेकिन जिन शब्दों में

आपने रामचरित मानस की प्रशंसा की है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि या तो आपने उसे पढ़ा नहीं या फिर आपने उसकी विषय वस्तु को समझने की चेष्टा नहीं की। जैसे कार से चलने वाले लोग सड़क पर आसमान की छत के नीचे लेटने वाले लोगों के कष्टों की ओर ध्यान नहीं देते वैसे ही आपने ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होकर रामचरित मानस में व्याप्त शूद्रों के प्रति घृणा की ओर ध्यान नहीं दिया। इस चोट को तो देश के करोड़ो सचेत शूद्र ही महसूस करते हैं। निश्चय ही आपके इस कार्य ने देश के करोड़ो शूद्रों और यवनों (मुसलमान, ईसाई) के दिलों पर गहरी चोट की है क्योंकि रामचरित मानस तो फतवा देती है। कि-

आभीर यमन किरात खस, स्वपचादि अति अघरूप जे।

(बालबोधिनी टीका उत्तर काण्ड पृष्ठ 1041)

अर्थात् अहीर, मुसलमान, भील, डोम आदि अत्यंत पापी और नीच कौमे हैं। 'भारत का संविधान' अब सभी इन्सानों को समान मानने का आदेश देता है और कौम आदि के आधार पर ऊँच-नीच के भेद को दण्डनीय मानता है जबकि पण्डित तुलसीदास कृत रामचरित मानस उन्हें पापी और नीच कहता है तो फिर उक्त ग्रंथ का यह फतवा क्या 'भारत का संविधान' के पूर्णतया विपरीत नहीं है? आखिर इन कौमों के करोड़ों लोगों के दिल पर पापी और नीच कहने से चोट नहीं लगेगी? पण्डित तुलसीदास का यह कहां का न्याय है कि किसी कौम के सारे लोगों को पापी और नीच कह दें। इस प्रकार अनेकों कौमों के प्रति घृणा व्यक्त करने वाला ग्रंथ तो क्या राष्ट्रीय भी हो सकता है।

रामचरित मानस में जातीयता का प्रबल पोषण और सामाजिक बराबरी का प्रबल विरोध है। उसमें गुणों के आधार पर व्यक्ति का सम्मान नहीं वरन् जाति में पैदा होने को ही ऊँच और नीच जाति का आधार माना गया है। पण्डित तुलसीदास ने कलयुग के वर्णन के नाम पर काकभुसुण्डि से आक्रोश प्रकट करवा कर जन्म के आधार पर जाति प्रथा को वेद के अनुसार कह कर जातीयता को कायम रखने की साजिश रामचरित मानस में की है। जैसे कोई व्यक्ति अपने इस इरादे से कि दूसरे के खिलाफ उसकी रुपयों की डिग्री मंजूर हो जाये, तिकड़म से कई लोगों के सामने उस दूसरे व्यक्ति के कई पुश्तों से अपने परिवार का रिश्ता और प्रेम वर्णन करते-करते यह भी कह जाये कि 'अनेक बार उसके पुरखे जरूरत पर रुपया ले जाते और दे जाते थे केवल एक बार ही इतना रुपया रुक गया। शायद वे भूल गये होंगे वरना ऐसा हो ही नहीं सकता था कि रुपया वापस न आये। खैर उसकी कोई बात नहीं दोनों परिवारों में प्रेम टूटा कभी नहीं। जैसे इस प्रकार के वर्णन में अन्य बातें सजावट के तौर पर हैं और मुख्य बात रुपयों का लेना साबित करना है। वैसे ही

पण्डित तुलसीदास का कलियुग वर्णन मुख्य रूप से जाति प्रथा को कायम रखने के लिये ही है जिसमें शूद्रों को अधम और नीच कह कर ब्राह्मणों की सेवा करने को वेद सम्मत कहा गया है यदि शूद्र ज्ञान प्राप्त करके बाबा साहब डॉ० अम्बेडकर की तरह योग्य बन जायें और करोड़ों अनपढ़ या कम पढ़े ब्राह्मणों को सही मार्ग बताने की क्षमता का उपयोग करें तो रामचरित मानस के अनुसार यह वेद वर्णित धर्म के विपरीत घोर कलियुग का लक्षण होगा, यथा-

बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन, हम तुम्हते कछु घाटि।
जानइ ब्रह्म सो बिप्रवर, आँखि देखावहिं डाटि।।

(उत्तरकाण्ड 10113 बा.टी.)

ब्राह्मणों को शूद्र आंखे दिखाकर डाटते हुए उनसे विवाद करते हैं कि क्या हम तुमसे कुछ कम हैं जो ब्रह्म को जाने वही श्रेष्ठ ब्राह्मण है।

यानि जन्म के आधार पर छोड़कर यदि कर्म के आधार पर कोई जाति की बात कहे तो पण्डित तुलसीदास उसे कलियुग बता कर वेद विरुद्ध कहेंगे। नीचे की कुछ चौपाइयाँ इसे और भी स्पष्ट कर देती हैं, यथा-

जो बरनाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच, किरात, कोल कलवारा।।
नारि मुई गृह सम्पति नासी। मूड़ मुड़ाय होहि संन्यासी।।
ते बिप्रन्ह सन पाँव पुजावहिं। उभय लोक निज हाथ नसावहिं।।

(उत्तरकाण्ड पृष्ठ 1014 बा. टी.)

जो चारो वर्णों में नींच तेली, कुम्हार, डोम, बहेलिया, कोलभील, कलवार आदि हैं, वे सब स्त्री के मरने और घर की संपत्ति का नाश होने पर मूड़ मुड़ाकर सन्यासी बाबा बन जाते हैं। वे ब्राह्मणों से पैर पुजाते और अपने हाथ से इह लोक और परलोक नष्ट करते हैं।

यदि ब्राह्मण इन्ही परिस्थितियों में साधू बन जाये तो तुलसीदास और उनका रामचरित मानस उसके खिलाफ एक शब्द कहने को तैयार नहीं, वे तो ब्राह्मण वंश में पुनर्जन्म के जोर से पैदा होकर सारे अधिकारों से युक्त हो गये लेकिन चारों वर्णों में नीच जातियों के लोग साधू कैसे हो सकते हैं और फिर वे ब्राह्मणों से कैसे पैर छुआ सकते हैं। इससे क्या यह स्पष्ट नहीं है कि रामचरित मानस मनुस्मृति में वर्णित गंदी और जड़ जाति प्रथा का पोषक ग्रंथ है जो सामाजिक न्याय का भयंकर विरोधी कहा जायेगा। आगे की तीन चौपाइयाँ तो रामचरित मानस की पूरी तरह पोल खोल देती है।

विप्र निरक्षर लोलुप कामी। निराचार, शठ वृषली स्वामी।।
शूद्र करहिं जपतप ब्रत नाना। बैठि बरासन कहहिं पुराना।।
सब नर कल्पित करहिं अचारा। जाइ न बरनि अनीति अपारा।।

(उत्तरकाण्ड पृष्ठ 1014 बा. टी.)

ब्राह्मण अनपढ़, लोभी, कामी, संध्या आदि आचार न करने वाले शठ होते हैं और नटिनी आदि शूद्र स्त्रियों को घर में डाल देते हैं। शूद्र नाना भांति के जपतप व्रत आदि करते हैं और श्रेष्ठ आसन पर बैठ कर पुराण कहते हैं। सब मनुष्य मनमाना आचार करते हैं ऐसा अपार अन्याय होता है कि कहा नहीं जाता।

उपर्युक्त चौपाइयों से यह स्पष्ट है कि रामचरित मानस में जन्म के आधार पर जाति को माना गया है। नहीं तो शूद्रों द्वारा जपतप और व्रत करने पर पण्डित तुलसीदास क्यों क्षोभ कर इसे मनमाना आचार कहकर अपार अन्याय की संज्ञा देते। पहले तो स्त्री व सम्पत्ति के नाश से उत्पन्न विरक्ति के बावजूद शूद्र का हक ही वह नहीं मानते कि वह सन्यासी हो सकता है। क्योंकि मनुस्मृति के अनुसार शूद्र को सन्यासी होने का हक नहीं। हालांकि पण्डित तुलसीदास के समय में या उनसे पूर्व शूद्र जातियों में पैदा लोग ही मान्य महात्मा थे या हुए थे। जैसे कबीर, दादू, रैदास, नानक आदि। पण्डित तुलसीदास इसे कैसे बर्दाश्त कर सकते थे। क्योंकि यह तो उनकी कौम की रोटियों का सवाल था। यदि दूसरे लोग वही काम करने लगे तो ब्राह्मणों की मान्यता समाप्त हो जायेगी और फिर दान और भिक्षा के एकमात्र अधिकारी ब्राह्मणों को दान और भीख मिलना बंद हो जायेगी। सब अवगुणों से युक्त ब्राह्मण रामचरित मानस के अनुसार विप्र ही हैं और जपतप, व्रत, दान करने वाले शूद्र नीच ही कहे जायेंगे। ऐसे गुणों का निरादर करने वाले ग्रंथ को आप कैसे विश्व ग्रंथ कहेंगे, यह आश्चर्य की बात है। क्योंकि पहले तो विश्व में भारत की भांति जाति प्रथा नहीं, दूसरे विश्व के सभी देशों व धर्मों में गुणों को ही श्रेष्ठता का आधार माना है जन्म को नहीं। अतः रामचरित मानस जैसे जातिवादी और संकुचित, तर्कहीन दृष्टिकोण वाले ग्रंथ को कोई विद्वान व्यक्ति विश्व ग्रंथ या राष्ट्रीय ग्रंथ मानने को भी तैयार नहीं।

तर्कहीन और जातिय पक्षपात का अद्वितीय उदाहरण देखें-

पूजिअ विप्र सील गुन हीना। सूद्र न गुन गन ज्ञान प्रबीना।।
दुष्टौ धेनु दुही सुन भाई। साधु रासभी दुही न जाई।।

(अरण्य काण्ड 612 बा. टी.)

अर्थात् शील और गुणों से हीन भी ब्राह्मण पूजने योग्य है पर गुण और ज्ञान में प्रवीण शूद्र पूजने योग्य नहीं। भाई, दुष्ट गऊ भी दुही जाती है, पर सीधी गधी नहीं दुही जाती।

यह बात रामचरित मानस ग्रंथ के नायक तथा कथित मार्यादा पुरुषोत्तम राम के मुंह से पंडित तुलसीदास ने कहलाई है। ऐसे मर्यादा पुरुषोत्तम राम की ऐसी मर्यादा के विरुद्ध आज भारत का विशाल बहुमत है। फिर जरा पंडित तुलसीदास

की अकल की परीक्षा लें। ब्राह्मणशील, गुणहीन, पूज्य और गुण युक्त ज्ञानी शूद्र अपूज्य, जैसे दुष्ट गाय दुही जाती है और सीधी गधी नहीं दुही जाती। यानी ब्राह्मण गाय के समान है ओर शूद्र गधी के समान। भला कोई भी समझदार मनुष्य पंडित तुलसीदास के इस उदाहरण को बुद्धिमत्ता पूर्ण और तर्क युक्त कैसे मान सकेगा क्योंकि गाय और गधी तो विभिन्न जाति के जानवर हैं लेकिन शूद्र और ब्राह्मण तो एक ही मनुष्य जाति के हैं। अतः इस विवेकहीन बात को कहला कर तुलसी ने अपने और ग्रंथ के नायक राम दोनों को ही बुद्धिहीन प्रमाणित कर दिया। आपने उसी तुलसीदास को भाव भीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। अब इसे क्या कहा जाये? उपर्युक्त तथ्यों के बावजूद क्या आप कहेंगी कि तुसलीदास ने परस्पर सहयोग, सामाजिक न्याय तथा सद्भावना का सन्देश दिया? उपर्युक्त तथ्य तो पूर्णतया इन तीनों के विपरीत है।

देवताओं के मुंह से निषाद (मल्लाह या केवट) जाति को निपट नींच कहलाना किस सद्भावना का प्रमाण है।

यहि सम निपट नीच कोउ नाही। बड़ वशिष्ठ सम को जग माही।

(अरण्यकाण्ड पृष्ठ 492 बा. टी.)

अर्थात देवता कहते हैं कि इस (निषाद) के बराबर कोई निपट या नीच नहीं और वशिष्ट (ब्राह्मण) के समान कौन संसार में बड़ा है? निपट और नीच क्या क्योंकि-

लोक वेद सब भांतिहि नीचा। जासु छाँह छुइ लेइय सींचा।।

(अरण्यकाण्ड पृष्ठ 462 बा. टी.)

अर्थात् निषाद लोक और वेद में सब प्रकार से नीच और उसकी छाया छूकर लोग नहाते हैं इस वाक्य से कौन सी सद्भावना निषाद जाति के प्रति प्रकट होती है और यदि कोई यह कहे कि ऐसे नीच निषाद को राम या भरत ने गले से लगा लिया था, यह सद्भावना का उदाहरण है तो फिर जो चुनाव के दौरान ब्राह्मण या मंत्री उम्मीदवार जाकर इन्हीं अछूत शूद्र कहें जाने वाले लोगों के यहां पानी पीते या खाना खाते हैं तो उसे भी सद्भावना का ही उदाहरण समझना चाहिए। किन्तु इस सारी तथाकथित सद्भावना के बावजूद लोक वेद सब भाँतिहिं नीचा वाक्य ही असल में ब्राह्मणों के द्वारा लाया जाता है, जिससे स्पष्ट है कि ऐसे काम सद्भावना के नहीं स्वार्थ के द्योतक होते हैं। और चुनाव के बाद इन्हीं ब्राह्मणों के मुंह से कहते सुना जाता है कि गरज पड़ने पर गदहा को बाप बनाना पड़ता है तो क्या सचमुच गदहा बाप हो जाता है। इन वाक्यों से आप भली-भाँति परिचित हैं, भले ही इनकी अनभिज्ञता कह कर आप सत्य का मुकाबला

करने से मुकरें। यदि रामचरित मानस की कथा ऐतिहासिक होती तो यह पूछा जा सकता था कि जिस राम ने गौतम ब्राह्मण की स्त्री को पत्थर से स्त्री बनाकर पवित्र कर दिया उसमें वही सद्भावना थी तो फिर निषाद, शवर, कोल, भंगी, बहेलिया आदि कौमों को गले लगाकर राम ने क्यों पवित्र नहीं कर दिया। क्यों वे जातियां हजारों वर्षों से नीच कही जाती रही हैं। और अब भी पंडित तुलसीदास ने रामचरित मानस में उन्हें क्यों नीच, अधम, पापी कहा। स्पष्ट है कि किसी कौम को नीच, अधम, पापी कहकर उसे समता के धरातल पर नहीं लाया जा सकता। इसे तो मानव-मानव की बराबरी के सिद्धांत के जरिये ही लाया जा सकता। जैसे किसी को बिना रोजी-रोटी दिये दयाभाव से रोटी देकर स्वावलंबी और स्वाभिमनी नहीं बनाया जा सकता। इसे तो मानव-मानव की बराबरी के सिद्धांत के जरिये ही लाया जा सकता है। इन तथ्यों और तर्कों के आधार पर रामचरित मानस में शूद्र, अन्त्यज, अल्संख्यकों (यवनों) के लिये घोर दुर्भावना और सामाजिक अन्याय के ही दर्शन होते हैं। फिर नीच अधम व पापी कहकर परस्पर सहयोग की बात करना किसी भी बुद्धिमान व्यक्ति की समझ में नहीं आ सकता।

इस प्रकार यदि जानबूझकर आपने पंडित तुलसीदास को 'परस्पर सहयोग, सामाजिक न्याय तथा सद्भावना का संदेश देने वाला' कहकर श्रद्धांजलि दी तो आपने देश के करोड़ों शूद्रों, अन्त्यजों और अल्पसंख्यकों को छलने की नापाक साजिश की और यदि आपने ये शब्द अनजाने में कहे तो मेरे ऐसे करोड़ों लोगों का सिर शर्म से झुक जायेगा क्योंकि भारत की प्रधानमंत्री बिना जाने बात कहने की आदी हैं, ऐसा विदेश के लोग कहेंगे।

हमें आप से नारी होने के नाते इतनी आशा अवश्य थी कि आप रामचरित मानस और तुलसीदास की रचनाओं में वर्णित नारी निंदा को न सहन कर सकेंगी। किन्तु आपने उस पर भी ध्यान नहीं दिया। रामचरित मानस तो नारी निंदा का भण्डार है। रामचरित मानस की सारी व्यवस्था नारी के विरुद्ध की गई है। आज आप जिस, 'भारत का संविधान' की मर्यादा कायम रखने के लिये शपथ बन्द्ध हैं उसी के अन्तर्गत तलाक का कानून है। किन्तु पण्डित तुसलीदास रामचरितमानस में सती शिरोमणि अनुसुइया के मुंह से कहलाते हैं।

वृद्ध रोगबस जड़, धन हीना। अन्ध बधिर क्रोधी अति दीना।।
ऐसेहु पति कर किय अपमाना। नारि पाव यमपुर दुःख नाना।।
एकइ धर्म एक व्रत नेमा। कायँ बचन मन पतिपद प्रेमा।।

(अरण्यकाण्ड पृष्ठ 569 बा. टी.)

अर्थात् बूढ़ा, रोगी मूर्ख, निर्धन, बहरा, क्रोधी और बड़ा दुखी, चाहे जैसा पति हो उसका अपमान करने से स्त्री यमपुर में अनेक प्रकार के दुख पाती हैं। कर्म, मन और वचन से पति के चरणों में प्रीति होना ही स्त्री के लिए एक मात्र धर्म व्रत और नियम है।

यदि तुलसीदास ने परस्पर सहयोग, सामाजिक न्याय और सद्भावना का सन्देश दिया है तो कृपया रामचरित मानस में उन स्थलों को बताएं जहां पर बूढ़ी रोगवश आदि पुरुष की भाँति होने पर स्त्री का अपमान न करने और प्रेम करने का उपदेश पुरुष के लिए दिया गया है? क्या यही सद्भावना और सामाजिक न्याय है और इसी को परस्पर सहयोग का सन्देश कहेंगे इसी अरण्यकाण्ड में आगे देखें पंडित तुलसीदास नारी के लिए क्या कहलवाते हैं। या कहते हैं-

केहि विधि अस्तुति करौं तुम्हारी। अधम जाति मैं जड़मति भारी।।
अधम ते अधम अधम अति नारी। तिन्ह महँ मैं मति मन्द अघारी।।

(अरण्यकाण्ड पृष्ठ 613 बा. टी.)

शबरी राम से बोली मैं आपकी किस प्रकार स्तुति करूँ क्योंकि एक तो मैं अधम जाति (शबर) दूसरे मूर्ख हूँ, तीसरे नारी हूँ। नीच से नीच और उससे भी बहुत नीच नारी है और मैं उन नारियों में भी मंद बुद्धि वाली गंवारिन हूँ इस प्रकार एक नारी के मुँह से जो सद्गुणों से युक्त परम भक्त थी, नारी जाति को नीच कहलाकर पंडित तुलसीदास स्वयं कहते हैं-

जाति हीन अघ जन्म महि मुक्त कीन्हि अस नारि। (अ. का. 614 बा.टी.)

जातिहीन, पृथ्वी में पाप रूपी ऐसी स्त्री को मुक्त कर दिया। स्वयं तुलसीदास के अनुसार वह स्त्री-

तजि जोग पावक देह हरि पद, लीन भइ जहँ नहिं फिरे।।

(अरण्यकाण्ड पृष्ठ 614 बा.टी.)

अर्थात् योग की आग से देह छोड़ (वह शबरी) हरि चरणों में मिल गई जहाँ से कोई नहीं लौटता।

ऐसी मोक्ष को प्राप्त करने वाली भद्र नारी को पंडित तुलसीदास शबर (अधम जाति) जाति में पैदा होने और केवल स्त्री होने के नाते पृथ्वी में पाप रूप समझते हैं। ऐसी बुद्धि वाले तुलसीदास को सद्भावना परस्पर सहयोग और सामाजिक न्याय का सन्देश देने वाला कहकर शायद आपने उनकी कलंक कालिमा को धोने का प्रयास किया है किन्तु जब कलंक कालिमा का कीचड़ अधिक होता है तो धोने वाला ही अपने को उससे कलंकित कर लेता है।

रामचरित मानस में जितनी नारी जिंदा है इसके सारे उदाहरण प्रस्तुत करना शायद आपके व्यस्त कार्यक्रम के साथ न्याय न होगा। रामचरितमानस के नायक

राम के मुँह से नारी के विषय में जितना कहलवाया गया उतना कहने से स्पष्ट हो जायेगा कि पंडित तुलसीदास का ग्रंथ रामचरित मानस कितने संकीर्ण विचार का समप्रदायिक ग्रंथ है यथा-

राखिअ नारि जदपि उर माहीं। जबती शास्त्र, नृपति बस नाहीं। (अ. का. 616)

इस तरह यदि स्त्री को हृदय में ही रखें तो भी उसे वश में नहीं समझना चाहिए क्योंकि शास्त्र, राजा और जवान स्त्री ये कभी वश में नहीं होते।

क्या जवान पुरुष सब वश में होते हैं? इस प्रकार पक्षपातपूर्ण वचन मर्यादा पुरुषोत्तम राम कहें तो फिर भारत की नारी को श्रद्धा राम पर कैसे हो सकती है और राम चरितमानस कैसे राष्ट्रीय ग्रन्थ हो सकता है। विश्व ग्रन्थ का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

आगे इसी अरण्य काण्ड में नारद द्वारा यह पूछने पर कि जब मैं विवाह करना चाहता था तो आपने क्यों नहीं करने दिया तुलसी के मर्यादा पुरुषोत्तम राम फर्माते हैं-

काम क्रोध मोहादि मद प्रबल मोह की धार।
तिन मंह अति दारूण दुखद माया रूपी नार।। (अ.का. 623 बा. टी.)

काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, मोह आदि की प्रबल सेना है। उसमें भी अति कठिन दुखदायी, माया रूपिणी नारी है।

सुनु मुनि कह पुराण श्रुति सन्ता। मोह विपिन कहुँ नारि बसंता।।
जप-तप-नेम जलाश्रय झारी। होइ ग्रीषम सोषइ सब नारी।।
काम क्रोध मद मत्सर भेका। इन्हहिं हरषप्रद बरषा एका।।
दुर्बासना कुमुद समुदाई। तिन्ह कहँ सरद सदा सुखदाई।।
धर्म सकल सरसीरुह बृंदा। होइ हिम तिन्हहि दहइ सुख मंदा।।
पुनि ममता जवास बहुताई। पलुहइ नारि सिसिर ऋतु पाई।।

अर्थात् मुनि, पुराण, वेद और सन्त कहते हैं कि मोहरूप बन को बढ़ाने के लिये स्त्री वसन्त ऋतु के समान हैं। जप तप नियम रूपी जलाशयों और झरनों को स्त्री ग्रीष्म ऋतु की भांति सुखा डालती है। स्त्री सदैव वर्षा ऋतु की भांति दुष्ट वासनारूप कोकाबेली के समूह को सुख देने वाली है। स्त्री धर्म रूप को हेमन्त के समान सुख देती है। ममतारूप जबासा को स्त्री शिशिर ऋतु की तरह हरा कर देती है।

पाप उलूक निकर सुखकारी। नारि निबिड़ रजनी अंधियारी।।
बुधि बल शील सत्य सब मीना। बनसी सम त्रिय कहहिं प्रवीना।।
अवगुण मूल सूलप्रद प्रमदा सब दुख खानि।
ताते कीन्ह निवारन मुनि मैं यह जियँ जानि।। (अरण्यकाण्ड 622 बा. टी.)

अर्थात् पाप रूप उल्लू को सुख के लिए स्त्री अंधेरी रात जैसी है। बुद्धि, बल, शील और सत्य ये सब मछलियाँ हैं, जिन्हें मारने के लिये स्त्री कटिया है, यह चतुर लोग कहते हैं। स्त्री अवगुणों की जड़, शूल पहुंचाने वाली, सब दुखों की खान है। हे मुनि! यह जान मैंने तुम्हारा ब्याह रोका था।

उपर्युक्त अंशों को पढ़ने के बाद क्या आपके मन में अब भी कोई संदेह रह जाता है कि पंडित तुलसीदास या उनका ग्रंथ रामचरित मानस कितनी ओछी और संकीर्ण बुद्धि का परिचय देती हैं। फिर और आपने उक्त रामचरित मानस चतुष्शताब्दी समारोह समिति की अध्यक्षता स्वीकार कर ली, इस पर विज्ञजनों को आश्चर्य ही होगा। वैसे आप दलितों और मुसलमानों का नेतृत्व प्राप्त करने के लिए राजनीतिक प्रयास कर रही है किन्तु आपने रामचरित मानस की चतुष्शती समारोह समिति का अध्यक्षता स्वीकार कर उस प्रयास को मटियामेट कर दिया। लेकिन इससे न तो आप सामाजिक न्याय का नेतृत्व दे सकेंगी और न 'भारत का संविधान' की मार्यादा का पालन कर सकेंगी। रामचरितमानस ब्राह्मणवाद को प्रतिपादित करने वाली पुस्तक है और ब्राह्मणवाद विषमता मूलक संस्कृति का जनक है। जब तक किसी देश में सामाजिक समता नहीं लाई जाती तब तक आर्थिक समता और राजनीतिक समता की बात दिवा स्वप्न से अधिक कुछ नहीं। विश्व के इतिहास में ऐसा किसी देश के बारे में प्रमाण नहीं है कि सामाजिक विषमता के रहते आर्थिक और राजनीतिक समता आ गई है। यह सम्भव है कि सामाजिक समता के बावजूद आर्थिक और राजनीतिक समता न आवे। लेकिन यह असंभव है कि सामाजिक समता के बिना आर्थिक और राजनीतिक समता यानी समाजवाद आ जाए।

इस तथ्य के प्रकाश में अपने निर्णय का पुनरावलोकन करें तो अच्छा होगा। क्योंकि तुलसीदास ऐसे हृदयहीन व्यक्ति ने जैसा रामचरित मानस में कहा है वैसा कोई निठुर व्यक्ति भी किसी स्त्री के लिए नहीं कह सकता। किसी स्त्री के तरुणाई में विधवा होने पर हर सहृदय व्यक्ति के हृदय में करुणा अपने आप उमड़ सकती है। किन्तु हृदयहीन तुलसी के दिल में तो ऐसी तरुण विधवा के प्रति गुस्सा उमड़ता है, यथा-

पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई। विधवा होई पाय तरुणाई। (अ. का. 470)

अर्थात् जो स्त्री पति के प्रतिकूल रहती है वह जन्म लेकर जहाँ जाती है वहाँ तरुणावस्था में विधवा हो जाती है आपके वैधव्य के प्रति सहृदय व्यक्तियों के दिल में करूणा है। लेकिन पंडित तुलसीदास इसे पूर्व जन्म की पति प्रतिकूलता और छल का परिणाम बताते हैं। नारी के लिए कितनी हृदयहीनता भरा ग्रन्थ है रामचरित मानस।

अतः मेरा आप से यही विनम्र अनुरोध है कि आप रामचित मानस चतुष्शती समारोह समिति की अध्यक्षता से ही अपने को न अलग कर लें वरन् सारे देश में उससे सरकारी सहयोग वर्जित कर दें और एक पैसा भी अर्जकों की गाढ़ी कमाई का इस पर राजकोष से खर्च न होने दें।

दिनांक 14.08.1970

आपका- **रामस्वरूप वर्मा**
एम.एल.ए., उत्तर प्रदेश

मर्यादा पुरुषोत्तम या ब्राह्मण गुलाम राम

ब्राह्मणवादियों का साहित्य इंसानी गैर बराबरी का प्रतिपादक है। इसलिये यह मानव सुलभ धर्म के विपरीत होने के कारण सदैव अस्थाई और दुर्बल रहा है। भारत की एकता को कायम रखने वाले पाँच साम्राज्य उन लोगों के थे जो ब्राह्मणवादियों की भाषा में शूद्र या म्लेच्छ कहे जाते हैं। सम्पूर्ण भारत पर वर्तमान समय को छोड़कर ब्राह्मणवादियों का कभी राज्य नहीं रहा, प्रागैतिहासिक काल में कृष्ण का राज्य सारे भारत में फैला था। इसके बाद मौर्य राज्य सारे भारत, ईरान, अफगानिस्तान, सीक्यांग प्रदेश व तिब्बत तक फैल गया। ब्राह्मणवादियों के अनुसार मौर्य लोग नाई और वर्ण संकर थे। इसके बाद समुद्र गुप्त, कुमार गुप्त, चन्द्र गुप्त विक्रमादित्य का साम्राज्य भारत में फैल गया जो तेली थे। इसके बाद मुसलमानों ने संपूर्ण भारत पर राज्य किया जो ब्राह्मणवादियों के हिसाब से म्लेच्छ थे और अन्त में भारत पर मराठा साम्राज्य छा गया जो कुर्मी यानी शूद्र थे। इस प्रकार ऐतिहासिक ब्राह्मण महिमा क्यों और कैसे? तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि ब्राह्मणवादी देश के लिये सदैव तोड़क और घातक के रूप में कार्य करते रहे। यही कारण है कि अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनने वाले ब्राह्मणवादी कभी सारे देश पर हुकुम नहीं कर सके। अपनी स्वार्थपरता, अनैतिकता, पाखण्ड, असत्य और पक्षपात के कारण ऐसे लोग सारे देश पर हुकूमत करने की क्षमता नहीं रख सकते। इंसानी बराबरी का प्रतिपादक बौद्ध धर्म देश की सीमाओं में न बंधकर सारे विश्व का धर्म बन गया और आज भी वह सीमा विहीन है। किन्तु ब्राह्मणवाद तो दुनिया के किसी देश में मान्य नहीं। धर्म सीमा विहीन होता है और अधर्म सीमित। यही बात ब्राह्मणवाद के बारे में देखने को मिलती है।

एक शंका लोगों के मनों में उठ सकती है कि इस समय देश में ब्राह्मणवाद छा गया है तो एक बार ही सही ब्राह्मणवाद सारे देश का शासक तो बन गया। उपर्युक्त पाँचों साम्राज्य तो आज के पाकिस्तान और बंगला देश को मिलाकर भारत देश के साम्राज्य बने किन्तु ब्राह्मणवादियों के कारण आज भारत पहले का भारत नहीं विखंडित भारत है। यदि इंसानी बराबरी पर आधारित नीति रही होती तो पाकिस्तान बनने का अवसर ही न आता। दूसरे विदेशी शासन से मुक्ति के हेतु आंदोलन 'इंडियन नेशनल कांग्रेस' ने चलाया वह भी मानव बराबरी के सिद्धान्त को लेकर चला और 'भारत का संविधान ' भी मानव मानव की बराबरी का प्रतिपादक है। अर्जकों की राजनीतिक उदासीनता से ब्राह्मणवादी अनर्जक प्रतिष्ठित

हो गये और मानव-मानव की बराबरी के सिद्धान्त को वालाए-ताक-रखकर ब्राह्मण ब्राह्मणवादी सत्ता के हामी बन गये। ब्राह्मणवाद कभी भी विशाल भारत पर राज्य नहीं कर सकता। इसलिये ब्राह्मणी सत्ता के आते ही भ्रष्टाचार, भाई-भतीजाबाद, व्यक्तिवाद, अनैतिकता, गैर बराबरी, पाखण्ड और पक्षपात का बोलबाला हो गया। फलस्वरूप आज सारा देश निरादर व अभाव की महती समस्याओं से आक्रान्त है। यह शासन कितना भी प्रयत्न करे अधिक दिनों तक टिक नहीं सकता। जो अधर्म पर टिका शासन है, वह स्थाई हो ही नहीं सकता। ब्राह्मणवादी शासन ने अपनी रक्षा के लिये पंडित तुलसीदास कृत रामचरित मानस चतुष्शती मनानी शुरू कर दी और जब उपर्युक्त समारोह समिति की अध्यक्षता श्रीमती इन्दिरा गांधी ने की, संरक्षण महामहिम राष्ट्रपति श्री बाराह वेंकट गिरि ने दिया तो मैंने दोनों को सन् 1970 में ही दो पत्र लिखे जो इस पुस्तक के प्रारम्भ में पढ़े जा सकते हैं। फिर भी ब्राह्मणवादी प्रचार को तीव्रता देने के नाते उपर्युक्त प्रधानमंत्री व राष्ट्रपति ने मेरी बातों का अनसुना कर दिया और केन्द्रीय सरकार ने एक करोड़ छियालिस लाख रुपया व उत्तर प्रदेश सरकार ने एक लाख रुपया उक्त पुस्तक व उसके विचारों के प्रचारार्थ दिया। देश के करोड़ों अर्जक भी ब्राह्मणवाद की मूर्च्छा की गोली खाकर सोये हुये हैं। अतः उन्हें जगाने के लिये रामचरित मानस ग्रंथ के आधार पर तात्विक विवेचना करना आवश्यक हो गया है।

प्रायः ब्राह्मणवादियों की ओर से रामचरित मानस की प्रशंसा में यह कहा जाता है कि इसके पठन-पाठन से नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा मन में होती है क्योंकि इसके नायक रघुकुल तिलक श्री रामचन्द्र मर्यादा पुरुषोत्तम थे। वैसे किसी भी समाज की नैतिक मूल्यों की परख तत्कालीन महाकाव्यों से होती है, क्योंकि उसमें काल्पनिक कथाओं द्वारा उस समाज के अनुसार नैतिक मूल्यों का प्रतिपादन होता हैं उसका आदर्श उस महाकाव्य का नायक होता है। राम चरित मानस का नायक राम इस दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिये।

वैसे सभ्य समाज के नैतिक मूल्यों में सबसे बड़ा महत्व इस बात का है कि जो अपने को बुरा लगे वह दूसरों के साथ मत करो-आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्। इसी सूत्र के आधार पर समाज के सारे नैतिक मूल्य बने हैं। जैसे-सच्चाई, कपटहीनता, निष्पक्षता, वीरता, वचन पालन, पर स्त्री गमन न करना आदि। इन्हीं नैतिक मूल्यों के आधार पर हम किसी को मर्यादा पुरुषोत्तम कह सकते हैं। यदि उक्त सूत्र के आधार के विपरीत आचरण किया गया है तो उसे मर्यादाहीन कहा जायेगा। मर्यादा पालन करने में जो सारे पुरुषों से उत्तम हो उसे मर्यादा पुरुषोत्तम कहा जाता है। इस कसौटी पर खरा उतरने पर ही हम राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कह सकते हैं। जिसने सदैव मूल्यों का पालन किया हो भले ही चाहे जैसा संकट आया हो उसे मर्यादा पुरुषोत्तम कहेंगे। सामान्य लोगों की तरह संकट पर या व्यक्तिगत

स्वार्थ के कारण मर्यादा तोड़ने वाले को सामान्य कोटि के पुरुषों में ही रखा जायेगा, मर्यादा पुरुषोत्तम की कोटि में नहीं। इस मानवीय दृष्टिकोण से रामचरित मानस के नायक श्री राम का चरित्र कसौटी पर रखकर देखने पर जो सिद्ध हो उसे ही सत्य समझकर स्वीकार करना होगा। केवल मर्यादा पुरुषोत्तम की रट लगाने से कोई मर्यादा पुरुषोत्तम नहीं कहा जा सकता।

राम में नैतिकता व निष्पक्षता का अभाव :

पंडित तुलसीदास ने रामचरित मानस में ब्राह्मणवादी गैर इंसानी मूल्यों के अनुसार अच्छे स्वामी के लिये निम्नलिखित गुण बताये हैं। प्रमाण में लोक व वेद दोनों की दुहाई दी है-

लोकहुँ बेद सुसाहिब रीती। बिनय सुनत पहिचानत प्रीती।।
गनी, गरीब, ग्राम नर नागर। पंडित मूढ़, मलीन उजागर।।
सुकबि कुकबि निज मति अनुसारी। नृपहिं सराहत सब नर-नारी।।
साधु सुजान, सुसील नृपाला। ईश अंस भव परम कृपाला।।
सुनि सनमानहिं सबहि सुबानी। भनिति भगति नति गति पहिचानी।।
यह प्राकृत महिपाल सुभाऊ। जान सिरोमनि कोशल राऊ।।

(बाल काण्ड पृष्ठ 32/33)

अर्थ-वेद में लोक में अच्छे स्वामी की रीति है कि वह विनती सुनते ही स्नेह को पहचान लेते हैं, धनवान, कंगाल, ग्रामवासी, पंडित, मूर्ख, मैले चित्त वाले, शुद्ध अन्तःकरण वाले, अच्छे और बुरे कवि ये सब स्त्री-पुरुष अपनी बुद्धि के अनुसार राजा की बड़ाई करते हैं और राजा सब लोकपालों के अंश से उत्पन्न होने के कारण साधु, चतुर, सुशील और दयालु होता है। राजा इन सब की बातें सुनकर और स्नेह देखकर सब में बुद्धि कम या अधिक गति पहचान सबको मीठी वाणी से यथोचित सम्मान देता है। यह स्वभाव तो प्राकृत राजाओं का है। फिर कोशला-धीश श्री रघुनाथ जी के स्वभाव को जो सब में शिरोमणि हैं क्या कहना है। उपर्युक्त मानदण्ड तुलसीदास के हैं। यहाँ प्रसंगवश यह कह देना अनुचित न होगा कि राजा सब लोकपालों के अंश से उत्पन्न होता है, जैसे-अल्पज्ञता का विचार आज की दुनिया में मान्य नहीं। यह तो राजतंत्र का पोषक और जनतंत्र विरोधी विचार है। राजा ईश्वर का अंश होता है और दूसरे लोग ऐसे नहीं होते यह बात आज तर्क पर हास्यास्पद प्रतीत होती है क्योंकि ऐसे ईश अंश से होने वाले राजाओं को जनता ने गद्दी से उतारकर जब धूल चटवाई तब उनकी ईश्वर के अंश से उत्पन्न होने की बात कहाँ रह गयी। बिना जनता के विश्वास के राज्य नहीं चला करता। इसलिये इस रूढ़िवादी तर्कहीन विचार का प्रचार करने वाला रामचरित मानस भला कितना ओछा ओर आसामयिक ग्रंथ है।

साधु, चतुर, सुशील और दयालु इन चार गुणों का समावेश साधारण राजाओं में होता है। अब वकौल तुलसीदास के राम शिरोमणि कहने पर इन गुणों से क्या अधिकतम दृढ़ता आई इसे देखें।

पंडित तुलसीदास के रामचरित मानस के राम निष्पक्ष नहीं वरन् पक्षपाती हैं। जो साधु और सुशील राजा का गुण नहीं अवगुण ही कहा जायेगा। यदि कोई राजा अपने लोगों को उन्हीं कुकर्मों के लिये माफी देने लगे जिनके कारण वह अपने विरोधी को मारता है तो फिर ऐसे पक्षपात से भरे राजा को कोई साधु या सुशील नहीं कह सकता। क्योंकि जो बात स्वयं को बुरी लगे उसे दूसरे के साथ मत कहो यह सभ्यता का मापदण्ड है। यदि कोई राजा अपने लोगों के लिये दूसरी न्याय की तुला रखे और विरोधियों के लिये दूसरी तो उसको मर्यादा पालक न कहकर मर्यादा घातक ही कहा जायेगा। रामचरित मानस के राम तो डंके की चोट पर ऐसा करते हैं। यथा-

रहति न प्रभु चित चूक किए की। करत सुरति सत बार हिए की।।
जेहि अघ बधेउ ब्याध जिमि वाली। फिरि सुकंठ सोइ कीन्ह कुचाली।।
सोई करतूति विभीषण केरी। सपनेहुँ सो न राम हियँ हेरी।।

(बाल काण्ड पृष्ठ 33-34)

अर्थ-कर्म में जो भूल हो जाये वह प्रभु के चित्त में नहीं रहती, किन्तु हृदय के भाव को वह सदा स्मरण रखते हैं। जिस पाप से (अपनी भौजाई से अनैतिक संबंध रखने के कारण भगवान ने बालि को व्याध के समान निठुर हो मार डाला) वही दुराचार (अपनी भौजाई से अनैतिक संबंध) सुग्रीव ने किया और वही कारतूत (अपनी भौजाई से अनैतिक संबंध) विभीषण की भी थी परन्तु इस ओर श्रीराम जी ने स्वप्न में भी ध्यान नहीं दिया बल्कि-

ते भरतहि भेटत सनमाने। राजसभाँ रघुबीर बखाने।। (बाल काण्ड पृष्ठ 34)

इन्हीं सुग्रीव और विभीषण का भरत मिलाप में सम्मान किया और राज सभा में उनकी बड़ाई की। चूंकि बालि व रावण राम के विरोधी थे अतः उनका अपराध प्राणदण्ड का कारण हुआ और राम के मित्र सुग्रीव व विभीषण उसी अपराध को जीवन भर करते रहे लेकिन राम ने उसकी कतई परवाह नहीं की। यह है ब्राह्मणवादियों का नैतिक मूल्य जो उनके मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने आदर्श के रूप में स्थापित किया यही कारण है श्रीमती इंदिरा गांधी व पंडित कमलापति त्रिपाठी रामचरित मानस के प्रचार पर लाखों रुपया खर्च करवा रहे हैं इनका भी यही हाल है। ये भी राम की इसी मर्यादाहीनता या पक्षपात के पोषक हैं और अपने इस कुकर्म या अवगुण को रामचरित मानस की आड़ में ढकना चाहते हैं। न्याय की निष्पक्षता ही सुशासन की सबसे बड़ी कसौटी है। पक्षपातपूर्ण आचरण करने वाला राज्य न तो आदर्श कहा जा सकता है न टिकाऊ हो सकता है। इसी ब्राह्मणवाद के आदर्श ग्रंथ मनुस्मृति में ब्राह्मण को

अवध्य कहा गया है। न्याय के दोहरे मापदण्ड रखे गये हैं। यही कारण है कि ब्राह्मणवादी राजा कभी साम्राज्य की स्थापना नहीं कर सके। साधु और सुशील राजा को तो प्राकृत यानी साधारण कहा गया और असाधु एवं दुश्शील राम को उनका शिरोमणि कहा गया है। यह है ब्राह्मणवादियों का प्रचण्ड पाखण्ड और मिथ्या प्रचार। आज श्रीमती इंदिरा गांधी और कमलापति त्रिपाठी आदि केन्द्र व राज्य सरकारों के प्रधानों के खिलाफ रोजाना पक्षपात व भ्रष्टाचार के आरोप लगाये जाते हैं, फिर ये तो रामचरित्र का अनुसरण कर रहे हैं। उन्होंने अपने भ्रष्ट मंत्रियों के दोषों का स्वप्न में भी ध्यान नहीं दिया गया, तो फिर तुलसी के रामचरित मानस के अनुसार ये तो मर्यादा पुरुषोत्तम राम के समान आचरण करने वाले होने के कारण मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाने चाहिये? स्पष्ट है कि रामचरित मानस नैतिक मूल्यों का ह्रास और अनैतिक मूल्यों का विकास करने वाली पुस्तक है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम की अनैतिकता व पक्षपात का इससे ज्वलन्त उदाहरण और क्या हो सकता है!

राम वीर नहीं कायर :

वीरता राजा का गुण माना गया है धोखे से शत्रु को मारना मर्यादा पुरुषोत्तम का काम नहीं है। वीर राजा शत्रु को सूचना देकर आमने सामने युद्ध लड़ने को ही वीरोचित कहा गया है यह वीरता का मापदण्ड प्रायः सारी दुनियाँ के लोग स्वीकारते हैं लेकिन छलप्रपंच व पाप पाखण्ड का पोषक ब्राह्मणवाद इस सर्वमान्य वीरता के मापदण्ड को नहीं स्वीकार करता। वर्णन में तो अवश्य इस सर्वमान्य मानदण्ड को ठीक ठहराता है। परन्तु आचरण विपरीत करता है यथा राम स्वयं कहते हैं:-

कहहुँ स्वभाव न कुलहिं प्रसंसी। कालहुं डरै न रण रघुवंशी।।

(बाल काण्ड पृ०248)

अर्थ-मै अपने कुल की प्रशंसा नहीं करता, सत्य ही कहता हूँ कि रघुवंशी युद्ध में काल से भी नहीं डरते। काल से न डरने वाले राम बालि से तो डरते ही थे। जब राम ने सुग्रीव से दोस्ती की और वह दोस्ती नहीं गरज थीं क्योंकि सीता की प्राप्ति उनके जरिये हो सकती थी यदि बालि को मार्ग से हटा दिया जाये। इसके लिये ब्राह्मणों के प्रबल अस्त्र फूट का प्रयोग करना राम के लिये स्वाभाविक था। वही किया। बालि के पास राम को खबर भेजनी चाहिये थी वह उनके दोस्त की स्त्री को वापस कर दें और उसे राज्य का हिस्सा दें। ऐसा न करने पर युद्ध में ललकारना चाहिये था। यह तो वीरोचित काम होता। लेकिन ब्राह्मणवादियों के सारे ग्रंथ छल कपट से ही जीत का समर्थन करते हैं। इसलिये यहाँ भी उसी का अनुगमन राम करते हैं। खुद चुप रहकर सुग्रीव को लड़ने भेजते हैं ताकि बालि को राम की मदद का गुमान न हो। बालि सुग्रीव के ललकारने पर एक वीर की भांति लड़ता है। सुग्रीव हार कर भागता है और राम से कहता है-

मैं जो कहा रघुबीर कृपाला। बन्धु न होय मोर यह काला।।

(किष्किन्धा काण्ड पृष्ठ 634)

इस परीक्षा में भाई-भाई की पक्की दुश्मनी का लाभ उठाकर राम फिर उसे माला डालकर लड़ने भेजते हैं और स्वयं उनकी लड़ाई पेड़ की आड़ से देखने लगते हैं यथा-

पुनि नाना बिधि भई लराई। बिटप ओट देखहिं रघुराई।।
बहु छल बल सुग्रीव कर, हियँ हारा भय मानि।
मारा बालि राम तब, हृदय माझ सर तानि।। (किष्किन्धा काण्ड पृष्ठ 634)

यानि बिल्कुल धोखे में छिपकर आघात करना डकैतों का काम भले ही हो किसी वीर का काम नहीं कहा जा सकता। काल से भी न डरने की हांक लगाने वाले राम बालि की वीरता से डरकर उसे धोखे से मारते हैं, यह कौन सी वीरता का परिचायक है? इसलिये वीर बालि राम को इस कायरोचित कार्य के लिये धिक्कारता है। यथा-

धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं। मारेहु मोहि व्याध की नाईं।।

(किष्किन्धा काण्ड पृष्ठ 634)

आपने धर्म की रक्षा के लिये अवतार लिया है और हमें बहेलिये की तरह (छुपकर) मारा। क्योंकि ऐसा ही प्रचार ब्राह्मणों ने राम के बारे में कर रखा था जैसे आज के ब्राह्मणों ने प्रचार कर रखा है कि श्रीमती इंदिरा गांधी दुर्गा या चण्डी देवी का अवतार हैं। यह तो पूरी तरह अधर्म का काम है कि किसी पर छुपकर धोखे से वार किया जाये। फिर डकैत और वीर में अंतर ही क्या रह जायगा? डकैत को सदैव घृणित समझा गया और वीरता की सदैव प्रशंसा की गयी। स्पष्ट है कि राम चरित मानस मानवीय नैतिकता का सृजन नहीं करती और उसके नायक राम मर्यादा पुरुषोत्तम तो क्या साधारण आदमी से भी हेठे समझे जाने चाहिये।

राम सत्यवादी भी नहीं :

रामचरित मानस के अरण्य काण्ड में सूर्पनखा ने राम से शादी करने का प्रस्ताव किया और कुमारपने को सच्चाई के साथ बता दिया-

तातें अब लगि रहिउँ कुमारी। मन माना कछु तुम्हहि निहारी।। (पृष्ठ 584)

इस पर राम क्या कहते हैं:-

सीतहि चितइ कही प्रभु बाता। अहइ कुमार मोर लघु भ्राता।।

(अरण्यकाण्ड पृष्ठ 584)

अर्थ-सीता जी की ओर देख राम ने यह बात कही कि मेरा छोटा भाई क्वांरा है। सीता की ओर देखने से इतनी ही ध्वनि निकलती है कि यह मेरी स्त्री है। वैसे उस जमाने में लोग प्रायः कई-कई शादियाँ करते थे और स्वयं राम के पिता दशरथ ने तीन शादियां की थीं। अतः राम का केवल इशारे से यह कहना कि मेरी शादी हो

गयी है। कोई खासमानी नहीं रखता। इसलिये उसे विशेष लालच देने के लिये राम ने उस भोली-भाली निरीह अबला से झूठ बोला और कहा कि (यदि तुम क्वांरी हो तो) मेरा छोटा भाई भी कुवांरा है। भला इस प्रकार निरीह अबला को छलना या धोखा देना कहां तक किसी मर्यादा पुरुषोत्तम के लिये उचित कहा जा सकता है। रामचरित मानस से यह कहीं नहीं साबित होता है कि सूर्पनखा धोखा देने के इरादे से आई थी। मनोहर रूप से आकृष्ट होकर आई थी और इसे उसने 'तो सम पुरुष न मो सम नारी, यह संयोग विधि रचा विचारी। कह कर बता भी दिया था। अतः सूर्पनखा की ओर से किसी छल व प्रपंच की बात कतई नहीं कही जा सकती, तब फिर राम ने उसे क्यों झूठ बोलकर धोखा दिया? साधारण आदमी भी ऐसी स्थिति में ऐसा कुटिल आचरण नहीं करेगा, फिर मर्यादा पुरुषोत्तम राम से ऐसी आशा कैसे की जा सकती है? स्पष्ट है कि राम का यह आचरण मर्यादाहीनता की चरम सीमा है। इतना ही नहीं जब इनके झूठ से क्रोधित होकर वह राम के पास जाती है तो राम ने उसको स्पष्ट चले जाने को कहने के बजाय उसकी नाक-कान काटने का इशारा किया और लक्ष्मण ने उसके नाक-कान काट दिये। तुलसीदास इसे लक्ष्मण का लाघव समझते हैं। जबकि वह नीचता की हद है।

उस जमाने में स्वयंवर की प्रथा थी। लड़की अपने पसंद का पति चुनने के लिये स्वतंत्र थी। चूंकि सूर्पनखा को उसके अनुरूप पुरुष तब तक नहीं मिला था इसलिये वह तब तक कुवारी बनी हुई थी। यदि उसने राम या लक्ष्मण से विवाह प्रस्ताव किया तो इसमें न तो निर्लज्जता की बात थी न युग की परम्परा का ही उल्लंघन था। तब शूर्पनखा के किस डर से डरकर उन दो महान वीरों ने उसके नाक कान काटे। उचित तो यह था कि सीता से कहकर उसे हटने की बात कहते और हिंसक होने पर जो उचित होता वह करते। यदि गुस्से के कारण उसने बाल बिखरा लिये, दांत किटकिटाने लगी तो इससे घबड़ाने या डरने की बात दो वीरों के लिये क्या थी? आज भी अपराधी औरत को गिरफ्तार करके पुलिस हथकड़ी डालकर नहीं ले जाती क्योंकि यह पुरुष के लिये शोभा नहीं देता। फिर राम की वीरता के यह सर्वथा विपरीत था कि उन्होंने अहिंसक सूर्पनखा पर हमला बुलवा दिया। वैसे राम ने जिन्दगी में सबसे पहले ताड़का को मारकर वीर की उपाधि पाई, जिसे आज कोई सराहेगा नहीं। किन्तु ताड़का हिंसक थी अतः राम ने आत्मरक्षा में उसकी हत्या की। इससे शायद लोग उन्हें माफी दे दें। किन्तु वीरता का पदक तो उनके लिये देना पुरुषत्व का ही उपहास होगा। दुर्बल पर हाथ उठाना किसी वीर को शोभा नहीं देता। भला राम ने इस प्रकार झूठ बोलकर और कायरोचित काम करके किस मर्यादा की स्थापना की? फिर भी तुलसीदास रामचरित मानस में-'जेहि ताड़का सुबाहु हति खण्डेउ, हरि को दण्ड।' कहकर तारीफ करते नहीं अघाते।

राम मानव समता के विरोधी और गुलामी के हामी थे :

विश्व के सारे धर्मों का सार और नैसर्गिक सत्य यह है कि मानव-मानव बराबर हैं। चाहे बुद्ध हों, ईसा हों या मुहम्मद साहब हों इन सभी महापुरुषों ने मानव समता का ही उपदेश दिया और ऐसी विधियों का निरूपण किया जिससे मानस समता का अधिकतम विकास हो सके। अतः मानव समता का विरोध अधर्म, अमर्यादित ही कहा जायेगा। किन्तु रामचरित मानस में वर्णित राम दूसरों की निगाह में और स्वयं अपने कथन से मानव समता के प्रबल विरोधी हैं। वे कहते हैं-

सुनु गन्धर्ब कहउँ मैं तोही। मोहि न सोहाइ ब्रह्मकुल द्रोही।।
मन क्रम वचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव।
मोहिं समेत विरंचि शिव बस ताके सब देव। (अरण्य काण्ड पृष्ठ 612)

अर्थ-हे गन्धर्व मै कहता हूँ उसे सुनो। ब्राह्मण कुल का द्रोही मुझे अच्छा नहीं लगता। कपट छोड़कर मन, कर्म, वचन से जो ब्राह्मण की सेवा करता है, मुझ समेत ब्रह्मा, शिव और सब देवता उसके वश में हो जाते हैं।

ऐसा फतवा देन वाला राम मर्यादा पुरुषोत्तम कैसे कहा जा सकता है। इससे अधिक घोर पक्षपाती एवं जातिवाद का प्रचारक भला कौन हो सकता है? जो इतनी निर्लज्जता के साथ मानव समता के सर्वमान्य एवं धार्मिक सिद्धान्त को ब्राह्मण गुलामी में बदलकर टूक टूक कर दें।

प्रश्न उठता है क्या राम ने शीलवान ब्राह्मण की सेवा के लिये कहा या चाहे जैसा शीलहीन ब्राह्मण हो केवल ब्राह्मणी के पेट से पैदा हुआ हो, उसकी सेवा करने के लिये कहा है, तो इसे भी राम के शब्दों में सुनिये-

सापत ताड़त परुष कहंता। बिप्र पूज्य अस गावहिं संता।।
पूजिअ विप्र शील गुन हीना। शूद्र न गुण गन ज्ञान प्रवीना।।
दुष्टौ धेनु दुही सुनि भाई। साधु रासभी दुही न जाई।।
कहि निज धर्म ताहि समुझावा। निज पद प्रीति देखि मन भावा।।
(अरण्य काण्ड पृष्ठ 612)

अर्थ-सन्त लोग कहते हैं कि शाप देने, मारने और कठोर वचन कहने पर भी ब्राह्मण की पूजा करनी चाहिये। शील और गुणों से हीन भी ब्राह्मण पूजने योग्य है, पर गुणों और ज्ञान में प्रवीण शूद्र पूजनीय नहीं। भाई दुष्ट गऊ भी दुही जाती है पर सीधी गधी नहीं दुही जाती। रामचन्द्र ने अपना धर्म बतला कर उसे समझाया और अपने चरणों में उसका प्रेम देखकर प्रसन्न हुये।

इतनी तर्कहीनता के साथ ब्राह्मणों की सेवा का समर्थन करने वाला राम भला महापुरुष या मर्यादा पुरुषोत्तम तो क्या साधारण पुरुष की भी बराबरी नहीं

कर सकता। यह तो किसी ब्राह्मण गुलाम के मुंह से ही निकल सकता है। इस पर भी यह तुर्रा यह कि राम ने इस प्रकार इस अधर्म को धर्म बतलाकर उसे समझाया। पहले तो पंडित तुलसीदास की अज्ञानता इसी से स्पष्ट होती है कि राम ने अपना कोई धर्म चलाया क्योंकि उसका कहीं वर्णन नहीं, न ही उसका कोई नाम है और फिर मानव समता के विपरीत कोई बात धर्म नहीं अधर्म ही कहीं जायेगी। यह दूसरी बात है कि ब्राह्मणों के इशारे पर चलने वाले राम ने ब्राह्मणों की गुलामी करना ही अपना धर्म समझ लिया हो। जैसे एक बार डकैती, कत्ल और बलात्कार के दोषी एक ब्राह्मण ने कहा कि भले ही उसने कत्ल और डकैती व बलात्कार किया हो किन्तु उसने धर्म नहीं छोड़ा। लोगों ने आश्चर्य से पूछा तो धर्म क्या है? उसने कहा हमने कह, गैर जाति की बनाई हुई रोटी आज तक नहीं खाई। उसका सारा धर्म रोटी तक सीमित रहा। अज्ञानी लोग धर्म का अंतर क्या जानें? यही बात पंडित तुलसीदास के रामचरित मानस से स्पष्ट है कि इसमें अज्ञान ही भरा है।

एक बार नहीं जब जब अवसर मिला है किसी न किसी बहाने राम ने ब्राह्मणों की सेवा का ही उपदेश दिया है, जैसे-

पुण्य एक जग महुँ नहिं दूजा। मन क्रम वचन बिप्र पद पूजा।।
सानुकूल तेहि पर सब देवा। जे तजि कपटु करइ द्विज सेवा।।

(उत्तरकाण्ड पृष्ठ 970)

प्रथमहिं विप्र चरण अति प्रीती। निज-निज धरम निरतश्रुति रीती।

(अरण्यकाण्ड पृष्ठ 503)

ते नर प्राण समान मोंहि, जिनके द्विज पर प्रेम। (अरण्यकाण्ड पृष्ठ 593)
मशक दंश बीते हिम त्रासा। जिमि द्विज द्रोह किये कुलनासा।।

(कि.का. 642)

इस प्रकार फतवा देने व ब्राह्मण विरोध में वंश नाश की धमकी देकर राम ने जाति विशेष का हितकारी होने का ही धर्म कमाया है। महापुरुष या मर्यादा पुरुषोत्तम, भला ऐसे संकुचित दृष्टिकोण के और जातिवादी व्यक्ति को कैसे कहा जा सकता है। राम चरित मानस में इस तथ्य को स्वीकार किया गया है यथा-

गो द्विज हितकारी, जै असुरारी सिन्धुसुता प्रियकंता।। (बालकाण्ड 157)

अर्थात् राम गाय व ब्राह्मण के हितकारी हैं।

राम रावण के वध के बारे में सलाह लेने अगस्त्य मुनि के पास जाते हैं तब भी वे राक्षसों को मनुज द्रोही करार नहीं देते। केवल द्विजद्रोही होने के कारण उनका नाश करना चाहते हैं। इसका यह अर्थ हुआ कि यदि कोई मानव-मानव की बराबरी का प्रतिपादन करे, यज्ञादि का विरोध अपव्यय निवारण के लिये करे तो वह द्विज

द्रोही होने के कारण राम चरित मानस के राम के अनुसार कतल करने काबिल है। बलिहारी है पंडित तुलसीदास की उनके ग्रंथ राम चरित मानस की उसके नायक तथाकथित मर्यादा पुरुषोत्तम राम की और उस रामचरित मानस की आंख मूंदकर समर्थन करने वाले की।

राम ने पूरे रामचरित मानस में ब्राह्मण का हित करने उनके लिये पैदा होने, उनकी रक्षा करने और उनके विरोधियों का सफाया करने का व्रत रखा है। वे अगस्त्य से कहते हैं-

अब सो मंत्र देहु प्रभु मोही। जेहि प्रकार मारौं मुनिद्रोही।।
द्विज द्रोही न बचहिं मुनिराई।जिमि पंकज वन हिम ऋतु पाई।।

(अरण्यकाण्ड पृष्ठ 578)

अर्थ- हे प्रभो! अब मुझे वही सम्मति दीजिये जिस प्रकार मैं मुनियों के द्रोही राक्षसों को मारूँ। हे मुनिराज ब्राह्मणों के वैरी वैसे ही न बचे, जैसे हेमन्त ऋतु आने पर कमल के बन उजड़ जाते हैं।

कहीं भी राम ने मनुज द्रोही शब्द का प्रयोग नहीं किया। मानव द्रोही का नाश करना किसी मर्यादा पुरुषोत्तम का काम नहीं है। किन्तु राम ने तो पूरे रामचरित मानस में एक बार भी यह नहीं कहा कि वे मनुज द्रोही का नाश करने के लिये पैदा हुये हैं। वे तो बारम्बार यही कहते रहे कि उन्हें ब्राह्मणों का द्रोही पसंद नहीं, वे ब्राह्मणों के द्रोही का नाश करेंगे। आदि आदि। स्पष्ट है कि जातीयता और मानव गैर बराबरी का हामी राम मर्यादा पालक नहीं मर्यादा घातक ही कहा जायेगा। भले ही ऐसे राम के राज्य की प्रशंसा भारत के ब्राह्मण या उनके पिछलगुये करें। किन्तु उसे न आदर्श राज्य व्यवस्था कहा जा सकता है न मानवोचित राज्य ही कहा जा सकता है। राम राज्य में ब्राह्मणों की गुलामी करना ही, भले ही वे शील व गुणहीन हों, ब्राह्मणेतरों का धर्म था यथा:

सब उदार सब पर उपकारी। द्विज सेवक सब नर अरु नारी।

(उत्तरकाण्ड पृष्ठ 943)

अर्थ-राम जी के राज्य में सब स्त्री पुरुष दानी परोपकारी और ब्राह्मणों के सेवक हैं। भला कौन स्वाभिमानी पुरुष ऐसे राम राज्य को पसंद करेगा जिसमें ब्राह्मणों की सेवा करनी पड़े।

उपर्युक्त तात्विक विवेचनसे यह स्पष्ट है कि पंडित तुलसीदास कृत राम चरित मानस के राम न तो मर्यादापालक थे न महापुरुष। वे शुद्धरूप से जातिवादी, अधर्मी और उदात्त गुणों से हीन थे। वे मनुजद्रोही के नहीं ब्राह्मणद्रोही के दुश्मन और ब्राह्मणों के मन, वचन, कर्म, से गुलाम थे दूसरों को भी ब्राह्मणों की गुलामी का उपदेश देते रहे और उसी के लिये सारे कुकर्म किये।

विवेक शून्यता :

मर्यादा पुरुषोत्तम कहे जाने वाले राम विवेकपूर्ण कार्य करने वाले नहीं। वास्तव में किसी गुलाम के लिये यह संभव नहीं। क्योंकि गुलाम तो सारा काम मालिक की इच्छानुसार उसी के हित में करता है। मानववाद के प्रतीक रावण को मारने के लिये उसके घर में फूट डालने के लक्ष्य की प्राप्ति के हेतु ब्राह्मणवाद के प्रतीक राम कैसे झूठे दावे करते हैं जिसमें विवेक का एकदम अभाव दिखाई देता है।

कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू।

सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं, जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं।

(सुन्दरकाण्ड पृष्ठ 690)

अर्थ-रामजी कहते हैं -जैसे करोड़ ब्रह्म हत्यायें लगी हों उसे भी शरण आने पर मैं नहीं छोड़ता। जब जीव मेरे सम्मुख होता है तभी मैं उसके करोड़ों जन्मों के पातक मिटा देता हूँ।

यह तो आजकल के शरीफ गुण्डों जैसी उक्ति है जो अपने गिरोह के लोगों की रक्षा करने की जिम्मेदारी लेने का दावा करने से कभी नहीं चूकते और उसमें उचित अनुचित की परवाह नहीं करते। नहीं तो हत्यारे को दोषमुक्त करना किस न्याय का पालन कहा जायेगा। महान पापी यदि साथ आ जाये तो उसके सारे पापों पर पर्दा डालना किस मर्यादा का पालन है? इससे तो पापी हत्यारे को प्रोत्साहन देने वाला समाज विरोधी विचार ही पनपेगा। स्पष्ट है कि राम का यह दावा किसी मर्यादा को नहीं वरन् मर्यादाहीनता को प्रोत्साहन देने वाला ही कहा जायेगा। इससे समाज में सदाचारियोंको नहीं दुराचारियों को ही बढ़ावा मिलेगा। भला यह कैसे मर्यादा बन सकता है। इस प्रकार तुलसी के राम किसी भी दृष्टि से मर्यादा पुरुषोत्तम नहीं अपितु विवेक शून्य अवश्य थे।

क्या राम चरित मानस धार्मिक ग्रंथ है?

उत्तर प्रदेश की विधानसभा में सन् 1957 में श्री भूप किशोर एम.एल.ए. ने पंडित तुलसीदास कृत रामचरित मानस को फाड़ा था। उस वक्त राम चरित मानस के फाड़ने पर इतना शोर नहीं मचा था जितना सन् 1974 में विधानसभा में एक एम.एल.ए. द्वारा उसके पन्ने को फाड़ने पर मच रहा है। इससे एक नतीजा आसानी से निकलता है कि सन् 1957 का उत्तर प्रदेश मानव समता के आधार पर आजादी पाने के कारण कुछ न कुछ मानववाद का कायल था। लेकिन उसके बाद लगातार ब्राह्मणवाद पुष्ट हुआ है इसलिये रामचरित मानस को फाड़ने पर ब्राह्मणवादी अखबार और लोग हाहाकार मचाये हुये हैं, अब ब्राह्मणवाद चरमोत्कर्ष पर है। अब किसी की क्या मजाल कि ब्राह्मणवाद का सबसे बड़ा हिन्दी भाषा का ग्रंथ फाड़े। यह ब्राह्मणवाद की तौहीन है और यह तौहीन वह शासक बन के कैसे सहन कर सकता है।

अर्जक संघ, आँख की किरकिरी :

ब्राह्मणवादियों द्वारा रामचरित मानस के एक पन्ने को फाड़ने पर इतना हाहाकार का एक कारण यह भी है कि सन् 1957 में देश में कोई भी मानववादी संस्कृति की पोषक एवं प्रचारक संस्था नहीं हुई थी। 1 जून 1968 को अर्जक संघ की स्थापना होने पर शुद्ध मानवादी विचार की पोषक एवं प्रचारक संस्था वजूद में आई। अर्जक संघ का निरन्तर फैलाव देश के विभिन्न सूबों में होता जा रहा है। आज वह ब्राह्मणवाद के गढ़ उत्तरी भारत में फैल गया है। अर्जक संघ से ब्राह्मणवादी ऐसे डरते हैं जैसे कोई लंगूर शेर से डरता है। इसी बीच एक मानववादी दल का जन्म हुआ जिसका नाम शोषित समाज दल है। जिसका सिद्धान्त वक्तव्य एवं कार्यक्रम तथा विधान पूर्णतया मानववादी है। गत 1974 उ.प्र. की विधान सभा के आम चुनाव में उक्त दल का एक विधायक भी जीत कर आ गया था जिसने मानववादी साहित्य प्रचार व प्रसार विधेयक उ.प्र. विधानसभा में पुनर्स्थापित कर दिया। इन सबसे डरे हुये ब्राह्मणवादी लोग अब रामचरित मानस का पन्ना फाड़ने में एक निश्चित दृढ़ता और उद्देश्य से देखते हैं। उन्हें ऐसा लगता है कि अब ब्राह्मणवादी साहित्य उत्तर प्रदेश में टिकने वाला नहीं। उत्तर प्रदेश ब्राह्मणवाद का गढ़ रहा है। वही पर उसकी जड़े कमजोर हों तो उसे मजबूती देश में और कहाँ मिलेगी? जैसे खटपट से डरे हुये लोग साधारण धमाके से बेहद हड़बड़ा जाते हैं। वैसे ही अर्जक संघ और शोषित समाज दल जैसे संस्था व दल के मानववादी प्रचार से डरे ब्राह्मणवादी यदि रामचरित मानस का एक पन्ना फटने से बेतहाशा चौंक जाये तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं।

कहावत है कि जब दिया बुझने को होता है तो तेज लौ देता है। ब्राह्मणवाद अब भारत में विनाश की ओर है। अतः वह अपने विनाश के अंतिम क्षणों में यदि तीव्रता दिखाये तो यह उक्त कहावत को चरितार्थ होने की ही बात है।

अर्जक संघ की विचारधारा से परिचित लोग जानते हैं कि अर्जक संघ और ब्राह्मणवाद का मोटा अंतर एक जुमले में यह है कि ब्राह्मणवाद बिना तर्क व तथ्य के किसी बात को मानने के लिये इसलिये जोर देता है कि वह बात भगवान या किसी ऋषि या मुनि के मुंह से निकली अर्थात ब्राह्मणवाद मानो की विचारधारा है जिसमें मनुष्य की विवेक बुद्धि कुण्ठित हो जाती है। अर्जक संघ मानववादी विचार-धारा का होने के कारण विवेक बुद्धि विकास पर अधिक जोर देता है यानी संक्षेप में यह जानो की विचारधारा मानो से श्रेष्ठ है और जब इसका सहारा विश्व के किसी मानव समूह ने लिया है तब उसकी सुख शान्ति में अपार वृद्धि हुई है। भारत आज दरिद्र और दुखी देश ब्राह्मणवाद के कारण है। इस मानो के ब्राह्मणवादी सिद्धान्त पर ब्राह्मणवादियों का इतना अटूट विश्वास है कि विधानसभा ऐसे तर्क के मंच पर भी वे मानो का सिद्धान्त चलाना चाहते हैं।

धार्मिक ग्रंथ का फाड़ना दण्डनीय :

खेद इस बात का है कि उत्तर प्रदेश की विधानसभा में ब्राह्मणवादियों की ओर से यह तर्कहीन बात पेश की गयी है कि रामचरित मानस का पन्ना फाड़ना 'भारत का संविधान' के प्रतिकूल है और जिस सदस्य ने ऐसा अनुचित काम किया है उसे सदन से निकाल दिया जाये। कोई व्यक्ति 'भारत का संविधान' के विरुद्ध कार्य करने पर सदन से निकाला जा सकता है या नहीं या इसके लिये कोई प्रक्रिया है या नहीं इस पर बहस करना यहां वांछनीय होगा, क्योंकि भारत का संविधान की धारा 14, 15 व 16 के अन्तर्गत जाति, लिंग या धर्म भेद के कारण कोई पक्षपात करना दण्डनीय है । अतः जो ब्राह्मणवादी अपने घरों में या बाहर छुआछूत को अपनाते हैं और जाति भेद या धर्म में भेद के कारण पक्षपात करते हैं उन्हें तो अब निकाल ही दिया होता। ऐसे लोग विधानसभा में नहीं हैं यह कहना सत्य से मुंह मोड़ना होगा। इसलिये सदन से निकालने की मांग के पीछे ब्राह्मणवादी सदस्यों का क्रोध ही अधिक जान पड़ता है विवेक नहीं। अतः ऐसे लोगों के उपर्युक्त वक्तव्य को ही विवेक की कसौटी पर कसा जाये।

ब्राह्मणवादी सदस्यों की ओर से भारत के सर्वोच्च न्यायालय के किसी निर्णय का हवाला दिया गया है। जिसमें धार्मिक पुस्तकों का फाड़ना जुर्म करार दिया गया है। धार्मिक भावना को ठेस पहुंचाना भारतीय दण्ड विधान की धारा 294ए के अन्तर्गत दण्डनीय है। परन्तु मूल प्रश्न तो यह है कि क्या राम चरित

मानस धार्मिक ग्रंथ है और है तो किस धर्म का? अभी तक की मान्यताओं और तथ्यों के आधार पर आदेश या देखरेख में लखे गये धार्मिक ग्रथ की संज्ञा केवल उसे दी जाती रही है जो किसी धर्म के प्रतिपादक ने लिखा हो या उनके विचारों को प्रमाणरूप में प्रस्तुत करने का दावेदार हो और माना जाता हो। उदाहरण के लिये महामना बुद्ध के उपदेश त्रिपटकों में निहित माने जाते हैं। इसी प्रकार महामना ईसा के विचार बाइबिल में संग्रहित माने जाते हैं। और हजरत मुहम्मद के विचार कुरान में सग्रहीत माने जाते हैं। इसी प्रकार अन्य धर्मों के बारे में भी यही पाया जाता है। यदि ब्राह्मणवाद को धर्म मान लें तो इसके विचार तो ब्राह्मण ग्रंथ (शतपथ ऐतरेय ब्राह्मण आदि) में संग्रहित माने जाते हैं। यदि इसे हिन्दू धर्म के नाम से कहें (जो शब्द किसी ब्राह्मणवादी ग्रंथ में नहीं पाया जाता) तो भी इसके मानने वाले प्रस्थान त्रयो को ही अपना धार्मिक ग्रंथ कहते हैं। हर धर्म के प्रवर्तक और उनके संग्रहीत उपदेश के ग्रंथ ही धर्म ग्रंथ कहे जाते हैं। यदि इन उपदेशों को कोई अपनी भाषा में लिखे और सजावे तो भी धार्मिक ग्रंथ की संज्ञा नहीं दी जा सकती। कोई कुरान को गजलों में हुबहू उतार दें और स्वयं लेखक बनकर उसका कुरान से इतर नाम दे तो क्या इस्लाम को मानने वाले उसे धर्म की संज्ञा दे देंगे? उत्तर सभी के बारे में नकारात्मक मिलेगा। तो फिर राम चरित मानस को धर्म ग्रंथ कैसे माना जाये? क्या इसके प्रणेता तुलसीदास किसी धर्म के संस्थापक थे या उन्होंने ऐसा दावा किया है? ब्राह्मणवाद, वैदिक धर्म, हिन्दू धर्म और सनातन धर्म आदि के नामों से कहे जाने वाले किसी भी धर्म का ग्रंथ राम चरित मानस नहीं।

नाव नाव मुददई आवे पैरत आवै साखी

पंडित तुलसीदास तो स्वयं रामचरित मानस की रचना के बारे में लिखते हैं 'नाना पुराण निगमागम सम्मतं यदारामायणे क्वचिदनयतोअपि' अनेक पुराणों निगम और आगम ग्रंथों की सम्मति के अतिरिक्त कुछ और भी मिलाकर कहा गया है। बेचारे पंडित तुलसीदास तो इसे धर्म ग्रंथ कहते नहीं फिर भी ब्राह्मणवादी साधारण सी पुस्तक को धर्म ग्रंथ बनाने पर तुले हुये हैं। क्योंकि इसमें ब्राह्मण महिमा का विशद गान और मण्डन मिलता है। धार्मिक ग्रंथ घोषित होने पर तो लोगों को उन विचारों को धर्म के नाम पर सिर झुकाकर मानने को या विरोधहीन कहने को बाध्य होना पड़ेगाजोकि आज के विज्ञान परक मानववादी युग में भला कैसे संभव हो सकता है?

स्वयं पंडित तुलसीदास राम चरित मानस की रचना का कारण बताते हैं कि उन्होंने इसे अपने सुख के लिये लिखा और रघुनाथ की गल्प का एक प्रबंध ग्रंथ है। (धर्म ग्रंथ नहीं, स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा भाषा निबंध मति मंजुल

मातनेति।) फिर भी ब्राह्मणवादी लोग इसे धार्मिक ग्रंथ चिल्लाते नहीं अघाते। वे यह भूल जाते हैं कि धर्म ग्रंथ संस्थापक के समय में ही बनते हैं। तब तो लोग उस पर चलकर धर्म के अनुयायी बनते हैं। भला रामचरित मानस के पूर्व से चले आने वाले धर्म या धर्मों में से किसी एक का धर्म ग्रंथ यह कैसे हो सकता है? इसके पूर्व के लोग जब यह ग्रंथ नहीं लिखा गया था तो किस धर्म ग्रंथ का सहारा लेकर उक्त धर्म मानते रहे? क्या राम चरित मानस के आधार पर कोई धर्म चला जिसको पंडित तुलसीदास ने चलाया।इन प्रश्नों का उत्तर नकारात्मक देने के लिये ब्राह्मणवादी बाध्य है। तब फिर राम चरित मानस को उत्तर प्रदेश के सदन में धर्म ग्रंथ कहने की हिम्मत इन ब्राह्मणवादियों को कैसे पड़ी? बहुज्ञता का दावा करने वाले अल्पज्ञ क्यों? कारण स्पष्ट है कि जातीय श्रेष्ठता बनाए रखने के अहं और दंभ ने इन्हें अंधा कर दिया है जिसके कारण इन्हें वास्तविकता नजर नहीं आती।

आज यह झगड़ा क्यों? :

आश्चर्य तो इस बात पर होता है कि जो लोग रामचरित मानस को धर्म का ग्रंथ की संज्ञा देते हैं वे आज तो उस पुस्तक का पन्ना फाड़ने पर बेहद नाराज हैं, किन्तु जब आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानंद ने अपनी सत्यार्थ प्रकाश की पुस्तक में पंडित तुलसीदास कृत रामचरित मानस को अपाठ्य ग्रंथ घोषित किया तब वे क्यों चुप रहे? क्यों उन्होंने आर्य समाज उसके प्रवर्तक उनके अनुयायियों ओर उनकी उक्ति के खिलाफ अपना रोष नहीं प्रकट किया? अपाठ्य ग्रंथ को फाड़ना, फेकना या जला देना साधारण सी बात है। कारण यही प्रतीत होता है कि स्वामी दयानन्द भी ब्राह्मणवादी थे। अतः ब्राह्मणवादियों को उन पर उतना रोष नहीं आया। किन्तु जब कोई अर्जक संघ के मानववादी विचारों से प्रभावित होकर विशाल बहुमत को शूद्र, म्लेच्छ अधम, पापी आदि लिखने वाली पुस्तक को मर्माहत होकर उस दृष्टिकोण से फाड़ता है तो ब्राह्मणवादियों के हाथ के तोते उड़ जाते हैं। वे अर्जकों में स्वाभिमान जागते देख अपने शोषण का अन्त नजदीक देखने लगते हैं और विकल हो जाते हैं। ऐसा स्पष्ट लगता है कि ब्राह्मणवादियों को क्रोध रामचरित मानस के फाड़ने पर नहीं वरन् अपने स्वार्थ की हानि होने पर है।

ब्राह्मणवादी समाचार पत्रों का अन्धानुकरण :

अनेकों समाचार पत्रो में रामचरित मानस का पन्ना फाड़ने पर रोषपूर्ण बयान छपे। मुझे एक भी ब्राह्मणवादी दैनिक समाचार पत्र ऐसा नहीं दिखाई दिया जिसने पन्ना फाड़ने की तारीफ भी छापी हो। इन समाचार पत्रों के विचार से पन्ना फाड़ने का कोई औचित्य हो ही नहीं सकता। आखिर वे भी ब्राह्मणवाद के अनुगामी हैं। अतः उनके यहां 'जानो' का कोई सवाल नहीं है। उनके यहां तो 'मानो' चलता है।

इस संबंध में रोष प्रकट करने वाले लोगों को दो समूहों में बांटा जा सकता है। एक तो वह समूह जो रामचरित मानस को धार्मिक ग्रंथ मानकर उस पर चलने के कारण नाराजगी जाहिर करता है उनका उत्तर ऊपर दिया जा चुका है। दूसरे वह समूह जो जन्म के नाम पर वर्ण व्यवस्था न माने जाने का तर्क देकर कर्म से मानने पर जोर देता है और फिर सारी ब्राह्मणवादी घोषणायें उनकी आड़ में सही सिद्ध करना चाहता है जाहिर है कि दिखावटी प्रगतिशीलता के नाम पर यथास्थिति कायम करने की इससे गंदी साजिश और क्या हो सकती है। फिर भी इस प्रकार के दावे को भी रामचरित मानस के संदर्भ में तर्क की कसौटी पर कस लिया जाये।

रामचरित मानस में जन्म से जाति का पोषण है?

अक्सर रामचरित मानस से उदाहरण चुनने वाले लोग ऐसे पात्रों के मुंह से कहे गये वाक्यों को चुन लेते हैं जिन्हें ब्राह्मणवादी दुष्ट या जड़ पात्र की संज्ञा देते हैं और यह कहकर सारी आलोचना को झुठलाने की कोशिश करते हैं इसलिये ऐसे उदाहरण चुनना ही उचित होगा जो ग्रंथकार ने स्वयं कहे हों या तथाकथित मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने कहें हो या किसी ऋषि मुनि ने कहें हों ऐसे वाक्यों ग्रंथकार के उस आदर्श के द्योतक हैं जिसे वह प्रतिष्ठित करना चाहता है।

रामचरितमानस के रचयिता पंडित तुलसीदास जाति जन्म से ही मानते थे। इसीलिये उन्होंने तथाकथित मर्यादा पुरुषोत्तम राम के मुख से स्पष्ट कहलाया है नीचे दिये गये सभी उदाहरण तेज कुमार बुक डिपो द्वारा प्रकाशित रामचरित मानस (रामायण) बालबोधिनी टीका से लिये जा रहे हैं अतः पृष्ठों की संख्या उसी के अनुसार है आरण्यकाण्ड में राम गंधर्व की चेतावनी देते हुये कहते हैं–

सुनु गन्धर्व कहउँ मैं तोही। मोहि न सोहाइ ब्रह्म कुल द्रोही।।
सापत ताड़त परुष कहंता। बिप्र पूज्य अस गावहिं सन्ता।।
पूजिअ विप्र सील गुन हीना। सूद्र न गुन गन ज्ञान प्रबीना।।
दुष्टौ गाय दुही सुनु भाई। साधु रासभी दुही न जाई।।

अर्थ–हे गन्धर्व जो मैं कहता हूं उसे सुनो। ब्राह्मण कुल का द्रोही मुझे अच्छा नहीं लगता। सन्त लोग कहते हैं कि शाप देने मारने और कठोर वचन कहने पर भी ब्राह्मण की पूजा करनी चाहिये। दुराचारी (शीलहीन) और मूर्ख ब्राह्मण पूजने योग्य है। परन्तु गुण और ज्ञान में प्रवीण शूद्र पूजनीय नहीं। भाई दुष्ट गऊ भी दुही जाती है पर सीधी गधी नहीं दुही जाती।

उपर्युक्त तथाकथित मर्यादा पुरुषोत्तम राम द्वारा निर्धारित मर्यादा सारे मनुष्य के लिये मान्य ही कही जायेगी। इसके अनुसार अच्छे कर्मो के करने से भी कोई ब्राह्मण नहीं हो सकता और दुराचारी और मूर्ख होने पर भी वह जन्मजात कोई

ब्राह्मण ही रहेगा। दुराचार और मूर्खता ब्राह्मण के लिये वर्णित गुणों या कर्मों का उल्टा है जब इनके होने पर भी कोई जन्म जात ब्राह्मण अपूज्य या शूद्र नहीं कहा जा सकता तो फिर नीच कर्म करने वाला शूद्र कहने वाले के पास क्या तर्क रह जाता है जो कर्म पर जाति मानकर रामचरित मानस के प्रसंगों को उचित ठहराते हैं। उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि मानसकार का एकमात्र उद्देश्य जन्म से ब्राह्मण को श्रेष्ठ बताना था कर्म से नहीं।

गरुड़ को उपदेश देने वाले काकभुसुडिं कलियुग का वर्णन करते हुये कहते हैं....

विप्र निरक्षर लोलुप कामी। निराचार सठ वृषली स्वामी।।
सूद्र करहिं जप तप ब्रत नाना। बैठि बरासन कहहिं पुराना।।
सब नर कल्पित करहिं अचारा। जाइ न वरनि अनीति अपारा।।

अर्थ-कलियुग में ब्राह्मण अपढ़, लोभी, कामी, सन्ध्या आदि आचार न करने वाले, शठ होते हैं। और नटिनी आदि शूद्र स्त्रियों को घर में डाल देते हैं। शूद्र नाना भांति के जपताप व्रत करते हैं। और व्यास गददी पर बैठकर पुराण बांचते हैं। सब मनुष्य मनमाना आचार करते हैं। ऐसा अपार अन्याय कहा नहीं जा सकता। जो लोग कर्म पर जाति या वर्ण की परिभाषा या व्याख्या करते हैं और जन्म से जाति को न मानकर उसके तीखेपन को कुछ कम करना चाहते हैं। वे ऊपर की चौपाइयों पर ध्यान देने का कष्ट करें। सारे कुकर्मो को करते हुये भी काकभुसुंडि उसे ब्राह्मणवाद शब्द से संबोधित करते हैं और जप-तप-व्रत आदि तथाकथित सुकर्मों को करने वाले शूद्रों के उक्त कामों को अनीति की संज्ञा देते हैं। यह है रामचरित मानस की मर्यादा जिसमें कर्म से जाति नहीं बनती वरन् जन्म से ही बनती है। यद्यपि कर्म से जाति या वर्ण मानने वाले उसी ब्राह्मणवादी व्यवस्था के पोषक हैं क्योंकि जाति-पांति या वर्ण में बंटा समाज मानव समता पर आधारित वर्ण विहीन समाज से सदैव हारा है और हारता रहेगा। अतः जो कर्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था उत्तम सिद्ध करने का दुष्प्रयास करते हैं समाज के उतने ही पतनकारी हैं जितने जन्म से वर्ण में बांटने वाले। आदर्श मानव समूह तो वही है जो सम+आज अर्थात आज बराबर हो उसे ही समाज की संज्ञा दी जा सकती है। गैर बराबर मानवों का समूह समाज कहलाने का अधिकारी नहीं। कहना न होगा कि रामचरित मानस मानव मानव में गैर बराबरी पैदा करने वाली एक निहायत तर्क रहित किताब है जो ब्राह्मणों के जरिये सारे श्रमशील लोगों के शोषण के षडयंत्र का प्रतिपादन इस प्रकार करती है जैसे कोई अफीम के मजे बताकर किसी को अफीम का आदी बनाकर उसके सुख एवं शरीर को नष्ट करने का कुचक्र रचे।

अब स्वयं कथाकार पंडित तुलसीदास का जाति पांति के बारे में क्या विचार है इसे भी जान लें।

आभीर यमन किरात खस स्वपचादि अति अघरूप जे।
कहि नाम बारक तेपि पावन होहिं राम नमामि ते।।

अर्थ- अहीर, मुसलमान, भील, भंगी बगैरह अत्यत पापी और नीच लोग भी एक बार रामनाम कहने से पवित्र हो जाते हैं। ऐसे रामजी को प्रणाम है सारे अहीर, मुसमान, भील, भंगी वगैरह लोग अत्यन्त पापी और नीच हैं इतना कहना स्पष्ट है कि पंडित तुलसीदास जन्म से जाति मानते थे। अन्यथा इतना ही कहना पर्याप्त होता है कि अमुक नीच और पाप कर्म करने वाले लोग भी एक बार राम कहने पर पवित्र हो जाते हैं। यह कवि स्वयं कहता है कि उसकी ऐसी मान्यता है तो फिर ब्राह्मणवादी अपना सिर क्यों यह सिद्ध करने में मार रहे हैं कि पंडित तुलसीदास का मतलब शूद्र से नीच कर्म करने वाला था। ऊपर के छंद में पंडित तुलसीदास ने अहीर, मुसलमान, भील, भंगी आदि जातियों के खिलाफ विषवमन करके अपनी उच्चता के मिथ्या दम्भ में इन्हें नीच व पापी कहा है। यदि एक बार राम कहने पर ये जातियां या इनके लोग पवित्र हो जाते हैं तो फिर किसी को बदनाम करने का ऐसा ही हुनर रहा जैसे कोई किसी के लिये कहे कि यह पहले दर्जे के डकैत रहे किन्तु गंगा से पवित्र हो सकते हैं। इससे सारे लोग उसे अवगुणी (डकैत) तो निश्चय ही मान लेंगे फिर ये पवित्र हो न हो इससे उन्हें क्या मतलब। यही हाल मानसकार पंडित तुलसीदास का है जो रामचरित मानस को धार्मिक ग्रंथ कहकर वकालत करते या धार्मिक ग्रंथ का दर्जा देना चाहते हैं। वे जरा अपने हृदय पर हाथ रखकर पूछे कि क्या कोई ऐसा भी धर्म है जो इंसान को अच्छा काम करने से रोकता हैं यदि धर्म के अनुसार सच बोलना अच्छा है तो कोई भी सच बोल कर धर्म की राह पर चल सकता है। किन्तु राम चरित मानस तो जप, तप, व्रत और पुराण पाठ को शूद्रों द्वारा किये जाने पर अपार अनीति की संज्ञा देता है। यदि वे अच्छे काम हैं तो फिर काकभुसुंडि ऋषि शूद्रों को इन्हें करने पर रोक क्यों लगाते हैं। और अगर ये शोषण के औजार ब्राह्मणों को सौंपे गये हैं तो फिर ऐसा शोषण का पोषक ग्रंथ धर्म का ग्रंथ नहीं अधर्म का ग्रंथ है।

वर्तमान मूल्य ही वास्तविक :

कुछ ब्राह्मणवादियों ने इस मिथ्या बात का सहारा लेकर रामचरित मानस ऐसे अधर्म ग्रंथ को उचित ठहराने का दुष्प्रयास किया है कि मानस में शूद्र नीच कर्म करने वाले को कहा गया है तब फिर अहीर, मुसलमान, भील, भंगी, तेली, कुम्हार, कलवार, बहेलिया आदि जातियों को गिनाने से क्या तात्पर्य है? केवल नीच कर्मों

को गिनाना चाहिये था जैसे इस्लाम पर ईमान न लाने वाला काफिर यानी विचार विभेद पर नाम होता तो भी ठीक था। यहां तो पूरी तरह से ब्राह्मणवाद को स्वीकारने वाले सारे अहीर, भील, भंगी, कलार, कुम्हार, तेली आदि पापी और नीच ही कहे जायेंगे तब फिर अनेक जातियों के करोड़ों लोगों को नीच और पापी बताने वाली पुस्तक क्या भारतीय दण्ड विधान की धारा 153 ए के अन्तर्गत जब्त करने योग्य क्यों नहीं जो जाति द्वेष को उभारती है। देश के विशाल बहुमत को नीच पापी अध म बताने वाली पुस्तक धार्मिक नहीं हो सकती।

153ए के अन्तर्गत अविलंब जब्त करने योग्य है। इसकी वकालत करने वाले भारत का संविधान की धारा 14, 15, व 16 का खुला उल्लंघन करने वाले हैं।

येन केन प्रकारेण ब्राह्मणवाद को प्रतिष्ठित रखने वाले न जाने यह तर्क देने से क्यों चूक गये कि शूद्र शब्द का भावार्थ पवित्र करने वाला है अर्थात यह शब्द शुच धातु से ण्वुल प्रत्यय लगाने से बना है। शुच् धातु का अर्थ है पवित्र करना शूद्र का अर्थ हुआ पवित्र करने वाला। अच्छा हुआ कि ब्राह्मणवादियों ने इस धात्वर्थ का सहारा लेकर यह साबित करने की कोशिश नहीं की कि पंडित तुलसीदास ने राम चरित मानस में इस वास्तविक अर्थ में शूद्र शब्द का प्रयोग किया। शायद वे ऐसा करते लेकिन सारे राम चरित मानस में ब्राह्मण महिमा और शूद्र निंदा का इतना खुला प्रतिपादन है कि ऐसी कुलांट लगाना उनके लिये सर्वथा असंभव है। दूसरे वे किसी भी सूरत में शूद्रों को ब्राह्मणों से श्रेष्ठ बताने को तैयार नहीं। यदि शूद्र पवित्र करने वाला है तो दूसरों की कमाई पर जीने वाला पराश्रयी तथाकथित उच्च वर्ण ही तो अपवित्र होता है जिसे पवित्र करके उसने शूद्र नाम धारण किया। इससे तो ब्राह्मणवाद का सारा पांसा ही पलट जाता। अतः शूद्र शब्द के इस मौलिक अर्थ को न ग्रहण करके अपने मन के अनुरूप अर्थ को ग्रहण किया। भारत का संविधान ब्राह्मण और शूद्र जैसे मानववाद विरोधी विभाजन को नहीं स्वीकार करता और धारा 14, 15 व 16 में इसका स्पष्ट उल्लेख करता है कि मूल वंश जाति, लिंग, धर्म या किसी स्थान पर जन्म के नाम पर कोई भेदभाव कानूनन, अवसर और सार्वजनिक सुविधाओं के भोग के बारे में नहीं किया जायेगा। पंडित तुलसीदास तो शूद्र के पुराण पढ़ने पर ही अपार अनीति का फतवा देते हैं। स्पष्ट है कि रामचरित मानस 'भारत का संविधान' का विरोधी ग्रंथ होने के कारण त्याज्य ही नहीं जब्त करने योग्य ग्रंथ है।

कुछ ब्राह्मणवादी अपने स्वार्थ के कारण इतनं अंधे हो गये हैं कि वे तुलसीदास मानस ऐसे 'भारत के संविधान' विरोधी ग्रंथ को चलाने की वकालत इस आधार पर करते हैं कि जहां पंडित तुलसीदास ने रामचरित मानस में स्त्रियों के लिये तथाकथित मर्यादा पुरुषोत्तम राम के मुंह से यह कहलवाया है कि-

राखिअ नारि जदपि उर माहीं। जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं।।
काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह की धार।
तिन महं अति दारुन दुखद, माया रूपी नारि।।
अवगुण मूल शूलप्रद प्रमदा सब दुख खानि। (अरण्य काण्ड)

अर्थ- चाहे स्त्री को हृदय में ही रखो फिर भी युवती शास्त्र और राजा कभी वश में नहीं होता। काम, क्रोध, लोभ, अहंकार मोह आदि की बड़ी प्रबल धार प्रवाहित है उसमें भी कठिन दुखदायी माया रूपिणी नारी है। स्त्री अवगुणों की जड़ शूल पहुंचाने वाली सब दुखों की खान है।

वही सीता, कौशल्या, पार्वती ऐसी श्रेष्ठ नारियों की भी कल्पना रामचरित मानस में है। ऐसे लोगों की बुद्धि पर तरस आये बिना नहीं रहता। यदि कोई व्यक्ति किसी को एक जोड़ा जूता भेंट कर सौ जूता मारे तो क्या उसका अपराध समाप्त हो जायेगा। क्योंकि उसने जूते की भेंट दीं है। ऐसे तर्क वाले इस बात पर राजी होंगे और जूता मारने को अपराध ही ठहरायेंगे। तो फिर सारी नारी जाति को अविश्वसनीय दुखों की खान और दुखदायी होने का फतवा देने वाले तथाकथित मर्यादा पुरुषोत्तम राम क्या 'भारत का संविधान' के उल्लंघन के दोषी नहीं? क्या वे भारतीय दण्ड विधान के अन्तर्गत दण्डनीय अपराधी नहीं? क्या ऐसी पुस्तक भारत की करोड़ों नारियों के दिल को चोट नहीं पहुंचाती?

राम चरित मानस के सर्वाधिक समर्थक ब्राह्मण ही क्यों?

एक बात इस सारे विवाद को स्पष्ट कर देती है कि रामचरित मानस को धर्मग्रंथ, मर्यादा ग्रंथ, साहित्यिक ग्रंथ आदर्श ग्रंथ आदि साबित करने वाले प्रायः ब्राह्मण ही हैं क्योंकि रामचरित मानस ब्राह्मणवादियों का ही ग्रंथ है। इस ग्रंथ के पढ़ने से ब्राह्मण की श्रेष्ठता अल्हड़ मन में बैठ जाती है और अविकसित बुद्धि के अवर्ण लोग ऐसा मानकर ब्राह्मणवादी शोषण के सहज शिकार हो जाते हैं। इसलिये इसे अवर्ण मछलियों को फांसने के लिये वंशी की भांति प्रयोग करने के कारण देश का ब्राह्मण समूह इसकी रक्षा करने में तत्पर है। वह अपने क्षुद्र स्वार्थ में अन्धा होने के कारण भूल जाता है कि मानववाद से ही देश व मानव का कल्याण है ब्राह्मणवाद के पुजारी ब्राह्मणों ने रामचरित मानस ऐसे निकृष्ट ग्रंथ की रक्षा करने का प्रयत्न किया तो वह दिन जल्दी आयेगा जब शूद्र, म्लेच्छ, पापी और नीच कहे जाने वाले 90 सैकड़ा भारतवासी इस किताब का नामोनिशान मिटाकर ही दम लेंगे। उसके एक दो पन्ने फाड़ने से उस क्रान्ति की सूचना मात्र मिलती है जो ढूंढ ढूंढ कर देश से ब्राह्मणवादी साहित्य ही मिटायेगी और बहुजन हिताय बहुजन सुखाय सृजित मानववादी साहित्य को उसके स्थान पर जन मानस में प्रतिष्ठित करेगी।

★★★

राम और रावण काल्पनिक पात्र

25 दिसम्बर 1974 को मद्रास में द्रविड़ कषगम की ओर से रावण लीला की गयी और उसमें राम लक्ष्मण और सीता के पुतले जलाये गये। तमिल लोगों का कहना है कि रावण द्रविड़ था और उत्तर के लोग उनका पुतला जलाकर सारे दक्षिण के द्रविड़ों का अपमान करते हैं। द्रविड़ कषगम (यानी द्रविड़ों का संघ) की ओर से पहले ही प्रधानमंत्री श्रीमती इंन्दिरा गांधी को लिखा जा चुका था कि वे उत्तर में रामलीला करना बंद कर दें क्योंकि उसे द्रविडों के मन को चोट पहुंचती है। क्योंकि रावण द्रविड़ था। यदि ऐसा नहीं किया गया तो वे दक्षिण में रावण लीला करने के लिये विवश होंगे जिसमें राम, लक्ष्मण और सीता के पुतले जलाये जायेंगे। ब्राह्मणवाद की पोषक श्रीमती इंदिरा गांधी ने द्रविड़ कषगम की बात नहीं मानी। अतः उसने 25 दिसम्बर 1975 को रावण लीला करके उसमें राम, लक्ष्ण और सीता के 18 फीट ऊँचे विशाल पुतलों को जलाया।

इस घटना से यह स्पष्ट हो गया है कि राम और रावण के झगड़े को बढ़ाने से देश टूटेगा। अतः यह आवश्यक हो गया है कि वास्तविकता पर गंभीरतापूर्वक विचार किया जाये। यदि राम और रावण ऐतिहासिक पुरुष रहे और उनका बैर विरोध निश्चित कारणों से हुआ तो फिर किसी को बुरा क्यों लगे, क्या भले सत्य पर पर्दा डालना असंगत कहा जा सकता है? किन्तु राम और रावण यदि ऐसे ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं है तो फिर काल्पनिक पात्रों को लेकर झगड़ना और राष्ट्र की एकता को नष्ट करना किसी भी प्रकार से उचित नहीं ठहराया जा सकता।

ऐतिहासिकता पर विचार :

राम और रावण के बारे में सबसे पहले चर्चा बाल्मीकि रामायण में मिलती है। उक्त रामायण के रचयिता को आदि कवि की उपाधि से विभूषित किया जाता है कदाचित इसलिये इतने बड़े महाकाव्य की रचना की। जब बाल्मीकि रामायण से पूर्व रामकथा का कोई ग्रंथ नहीं मिलता तो उक्त रामायण में उल्लिखित घटनाओं से उक्त पुस्तक की रचनाकाल निश्चित करना होगा। किसी ग्रंथ में वर्णित घटनाओं से प्रायः सामयिकता पर प्रकाश पड़ता है। क्योंकि वह अपने काल को भुला नहीं सकता भले ही वह कथानक किसी भी काल का हो।

गीता प्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित बाल्मीकीय रामायण के अयोध्या काण्ड के 108 व 109 सर्गों में निम्नांकित श्लोकों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह ग्रंथ बौद्ध काल के ह्रास के समय लिखा गया, जब लोग बौद्धों एवं चार्वाक मतावलम्बियों की खुलेआम मजाक उड़ाते थे, यथा-

यदि भुक्त मिहान्येन देहमन्यस्य गच्छति।
दद्यात् प्रवसतां श्राद्धं न तत् पथ्यशनं भवेत। (108/15)

अर्थ- यदि यहाँ दूसरे का खाया हुआ अन्न दूसरे के शरीर में चला जाता है तो परदेश में जाने वालों के लिये श्राद्ध ही कर देना चाहिये, उनको रास्ते के लिये भोजन देना उचित नहीं है।

स नास्ति परमित्येतत् कफरु बुद्धिं महामते।
प्रत्यक्षं यत् तदातिष्ठ परोक्षं पृष्ठतः कुरु।। (108/17)

अर्थ-अतः महामते। आप अपने मन में निश्चय कीजिये कि इस लोक के सिवा कोई दूसरा लोक नहीं । (अतः वहाँ फल भोगने के लिये धर्म आदि के पालन की आवश्यकता नहीं है) जो प्रत्यक्ष राज्य का लाभ है। उसका आश्रय लीजिये परोक्ष (पारलौकिक लाभ) को पीछे ढकेल दीजिये।

उपर्युक्त कथन जाबालि ऋषि का राम को वन जाने से विरत करने के लिये कहा गया है। जब राम इस कथन के लिये जाबालि से नाराज होते हैं और स्पष्ट रूप से अपने पिता द्वारा उन्हें याजक बनाये जाने की निन्दा करते हैं- (109/34)

यथा हि चोरः स तथा हि बुद्ध-स्तथागतम् नास्तिकमत्र विद्ध।
तस्माद्धि यः शक्यतमः प्रजानां स नास्तिके नाभिमुखो बुधः स्यात्।।

अर्थ-जैसे चोर दण्डनीय होता है उसी प्रकार (वेद विरोधी) बुद्ध (बौद्ध मतावलम्बी) भी दण्डनीय हैं। तथागत (महामना बुद्ध) और नास्तिक (चार्वाक) को भी यहां इसी कोटि में समझना चाहिए। इसलिये प्रजा पर अनुग्रह करने के लिये राजा द्वारा जिस नास्तिक को दण्ड दिलाया जा सके, उसको तो चोर के समान दण्ड दिलाया ही जाये, परन्तु जो वश के बाहर हो, उस नास्तिक के प्रति विद्वान ब्राह्मण कभी उन्मुख न हों उससे वार्तालाप तक न करें।

इति ब्रुवन्तं वचनं सरोषं रामं महात्मानमदीनसत्त्वम्।
उवाच पथ्यं पुनरास्तिकं च सत्यं वचः सानुनयं च विप्रः।। (109/37)

अर्थ- महात्मा श्री राम स्वभाव से ही दैन्य भाव से रहित थे। उन्होंनें जब रोषपूर्वक पूर्वोक्त बात कही, तब ब्राह्मण जाबालि ने विनय पूर्वक यह आस्तिकतापूर्ण सत्य एवं हितकर वचन कहा-(109/38)

न नास्तिकानां वचनं ब्रवीम्यहं न नास्तिकोऽहं न च नास्ति किंचन।
समीक्ष्य कालं पुनरास्तिकोऽभवं भवेय काले पुनरेव नास्तिकः।।

अर्थ-रघुनंदन न तो मैं नास्तिक हूँ और न नास्तिकों की बात ही करता हूँ परलोक आदि कुछ भी नहीं है ऐसा मेरा मत है। मैं अवसर देखकर फिर आस्तिक हो गया और लौकिक व्यवहार के समय आवश्यकता होने पर पुनः नास्तिक हो सकता हूँ, नास्तिकों की सी बातें कर सकता हूँ।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि बाल्मीकि रामायण महामना बुद्ध और चार्वाक ऋषि के बहुत दिनों बाद लिखी गयी, क्योंकि दोनों के उपर्युक्त स्पष्ट उल्लेख के साथ-साथ ब्राह्मणवाद की प्रतिस्थापना के अनुसार परलोक को न मानने वाले चार्वाक और महामना बुद्ध के अकाट्य तर्कों का उचित एवं तर्कपूर्ण उत्तर न देकर केवल जाबालि से यह कहलाया गया कि लौकिक व्यवहार के समय आवश्यकता पड़ने पर नास्तिक हो सकता है, यानी चार्वाक का 'पुनर्जन्मो न विद्यते' यानी दोबारा जन्म किसी का नहीं होता का सिद्धान्त अवसरवादी सिद्धान्त कहा गया है। महामना बुद्ध के अनात्मवाद यानी आत्मा नहीं है सारी सृष्टि केवल पदार्थ से बनी है, का भी यह मजाक है।

इससे स्पष्ट है कि जब ब्राह्मणवाद का पुनरोदय बौद्ध राज बृहद्रथ की हत्या के बाद उसके विश्वासघाती ब्राह्मण मंत्री पुष्यमित्र ने किया और धीरे-धीरे तर्को से नहीं ताकत से बौद्ध मतावलंबियों का दमन किया जाने लगा तभी ऐसे वाक्य बौद्ध धर्म के खिलाफ लिखने की हिम्मत कवि ने की होगी। बौद्ध काल के स्वर्ण युग में भला ऐसी तर्कहीन धमकी से भरी बौद्ध को राजदण्ड दिलाने की बात कैसे कही जा सकती थी। चार्वाक और बौद्धों के खिलाफ इस प्रकार के ललित साहित्य का सृजन वास्तव में गुप्तकाल में हुआ जो मुख्यतः ईसा की चौथी शताब्दी कहा जा सकता है। इस बात की पुष्टि बाल्मीकीय रामायण के किष्किंधा काण्ड के निम्नांकित श्लोकों से भी होती है। (11-12)

तत्र म्लेच्छान् पुलिन्दांश्च शूरसेनांस्तथैव च।
प्रस्थलान् भरतांश्चैव कुरूंश्च सह मद्रकैः।।
काम्बोज यवनांश्चैव शकानां पत्तनानि च।
अन्वीक्ष्य दरदांश्चैव हिमवन्तं विचिन्वथ।।

अर्थ- उत्तर में म्लेच्छ, पुलिन्द, सूरसेन, प्रस्थल भारत (इन्द्रप्रस्थ, हस्तिनापुर आस पास के प्रान्त) कुरु दक्षिण (कुरुक्षेत्र के आस पास की भूमि) मद्र, काम्बोज, यवन, शकों के देशों एवं नगरों में भलीभांति अनुसंधान करके दूर देश में और हिमालय पर्वत पर ढूंढो।

सिकन्दर के आक्रमण के बाद पश्चिम पंजाब में यवन बस गये थे और शकों ने भारत पर आक्रमण करके वर्तमान हरियाणा तक अपने नगर बसा लिये थे। इनका उल्लेख यह साबित करता है कि जब बाल्मीकीय रामायण लिखी गयी तब यवन, शक और म्लेच्छ (हूण) भारत में भली-भांति बस चुके थे। हूणों के आक्रमण का काल तो गुप्तकाल ही ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर ठहरता है। अतः उपर्युक्त प्रमाणों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि

बाल्मीकीय रामायण का रचनाकाल इतिहास प्रसिद्ध गुप्तकाल ही है। गुप्तकाल में वैष्णव सम्प्रदाय का उदय भली-भांति हो चुका था जो ब्राह्मणवाद की ही विचार-धारा के अन्तर्गत आता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या राम व रावण वास्तव में पैदा हुये या रामायण के कवि ने अपने विचारों को मूर्त रूप देने के लिये इन कल्पित पात्रों की रचना की? महामना बुद्ध के बाद का इतिहास भली भांति उपलब्ध है। जिसमें कहीं भी दशरथ या राम के अयोध्या का राजा होने का उल्लेख नहीं है और न लंका के किसी रावण राजा का ही उल्लेख कहीं हुआ है। यद्यपि ब्राह्मणवादी विद्वानों ने ब्राह्मणवाद में अटूट विश्वास पैदा करने के लिये रावण की लंका की खोज बड़े जोर शोर से की किन्तु आज तक उन कल्पित पात्रों को वास्तविकता की कसौटी पर कसना ही अनुचित है। वह तो केवल दो विचाधाराओं के प्रतीक रूप हैं। अतः उनका बहुत सा आचरण वास्तविकता से परे भी दिखाया जाता है ताकि विचारधारा में कोई कमी न रह जाये। यह बात उक्त रामायण में भी स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

ऐसा लगता है कि महामना बुद्ध के संबंध में लिखे गये अश्वघोष के बुद्ध चरितम् के विरोध में बाल्मीकीय रामायण का सृ जन हुआ। चूंकि राम का अर्थ है रमन्ते हृदयः स रामः जो मन में बस जाये वह राम है। इसलिये कवि ने नाम के अनुसार राम के सुन्दर होने की कल्पना कीं। रावण का अर्थ है अधिक शोर करने वाला, तेज बोलने वाला यह तर्क प्रवण चार्वाक और बौद्धों के लिये प्रयुक्त किया गया है क्योंकि वे तर्क के द्वारा ही सत्यासत्य का निर्णय करते थे और ब्राह्मणवादी मानो के सिद्धान्त पर विश्वास करने के कारण उनके सामने जरा भी नहीं ठहर पाते थे। इसलिये उन्हें अधिक तेज बोलने वाला कहा। ऊपर के श्लोकों से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्राह्मणवादियों के पास महामना बुद्ध और ऋषि प्रवर चार्वाक के तर्कों का खण्डन करने की सामर्थ्य बिल्कुल नहीं थी। वे तो उन्हें मजाक के बल पर टालने की कोशिश करते थे।

यही कारण है कि इतिहास में राम व रावण नाम के राजाओं का वर्णन कहीं किसी राज्यवंश परम्परा में नहीं मिलता। इससे यह स्पष्ट है राम का त्रेता में पैदा होना और ब्राह्मणवाद की स्थापना के लिये मानववादी रावण को मारना एक कोरी कल्पना है। इसमें यथार्थ रंचमात्र भी नहीं। तब फिर इन कल्पित कहानियों के पीछे भारत के लोग आपस में लड़े यह कोई विवेकवान व्यक्ति बर्दाश्त नहीं कर सकता। फिर अब तो भारत का संविधान मानव मानव की बराबरी की घोषणा करता है जो सभी भारतीयों ने कानूनन स्वीकार एवं अंगीकृत किया है तब फिर विषमतामूलक ब्राह्मणवाद की प्रतिष्ठाकारक बाल्मीकीय रामायण व तुलसी की रामचरित मानस

कैसे आदर्श ग्रंथ कहे जा सकते हैं और कैसे उनके कथानकों को प्रचारित किया जा सकता है। यह तो भारत का संविधान और उसके मानने वाले सभी भारतीयों का घोर अपमान है। वास्तविक भारत का संविधान बालायेताक रखकर कथित राम-रावण को वास्तविकता देना देश की सारी जनता के प्रति विश्वासघात है।

राम रावण के चरित्रों का विश्लेषण :

किसी महाकाव्य में पात्रों का विश्लेषण काव्य में वर्णित तथ्यों के आधार पर किया जाता है और उससे निष्कर्ष निकाला जाता है कि उक्त महाकाव्य के जरिये कवि ने किस विचार का प्रतिपादन और किस विचार का विरोध किया। चूंकि उत्तरी भारत में खेली जाने वाली रामलीला पंडित तुलसीदास द्वारा रचित रामचरित मानस के आधार पर बनी है और उसका ही सर्वाधिक प्रभाव वर्तमान भारत के लोगों पर है। अतः नीचे उसी के कल्पित पात्रों (राम-रावण) के चरित्रों का विश्लेषण किया जायेगा ताकि लोग उसमें मण्डित और खण्डित विचार-धाराओं को भली भांति जान सकें। ऊपर के श्लोकों से स्पष्ट है कि राम बौद्ध धर्म के और चार्वाक दर्शन के पूरी तौर पर विरोधी थे और उन्हें चोर की संज्ञा देना चाहते थे। रावण राम का विरोधी चित्रित किया गया है। यह भी माना गया है कि रावण का ऐश्वर्य और वैभव शिखर पर था और उसके राज्य में प्रजा सुखी और संपन्न थी। सोने की लंका स्वर्ण युग की प्रतीक जान पड़ती है। पंडित तुलसीदास के रामचरित मानस का मुख्य आधार बाल्मीकि रामायण ही है। पंडित तुलसीदास ने रामचरित मानस का लिखना सन् 1574 की प्रथम तिमाही में प्रारम्भ किया और दो वर्ष से अधिक समय में पूरा किया। यह पुस्तक मुगल सम्राट अकबर के राज्य काल में लिखी गयी।

राम-रावण क्रमशः ब्राह्मणवाद और मानववाद के प्रतीक :

पंडित तुलसीदास के रामचरित मानस में ब्राह्मणवादी संस्कृति की प्रतिष्ठा की गयी है और मानववादी संस्कृति को बिगाड़ कर पेश किया गया है जैसा कि कवि के लिये विवशता थी। ब्राह्मणवादी तर्क की कसौटी पर खोटा और मानववाद तर्क की कसौटी पर खरा उतरता रहा है। यही कारण है कि ब्राह्मणवाद तर्क का सहारा न लेकर भगवान या ऋषि के मुंह से वचन कहलाकर उन्हें सही मानने पर जोर देता है। मानववाद तर्क पर खरा होने के कारण तर्क का सहारा लेता है। ब्राह्मणवाद भद्दे को भी प्रशंसात्मक शब्दों से भूषित करके उसके बल पर उसे उत्तम कहता है। जैसे-

उर मणिहार पदिक की शोभा। विप्र चरन देखत मन लोभा।। (बा.का. 169)

यानी राम की छाती पर ब्राह्मण का चरण चिन्ह देखकर मन लुभा जाता है। सुन्दरता की दृष्टि से एक सी चिकनी त्वचा उत्तम मानी जाती है। कोढ़ आदि के

कारण उभरी त्वचा बदसूरत लगती है इसे सब जानते हैं। किसी की छाती में पैर का निशान ऐसा सुन्दर लगे कि मन मोहित हो जाये तो लोग अवश्य गोदवा लेते किन्तु ऐसे भद्दे निशानों को कौन पसन्द करेगा? फिर भी पंडित तुलसीदास ब्राह्मणवादी हठ के कारण उसे चित्ताकर्षक बता रहे हैं। इससे यह समझने में देर नहीं लगती कि ब्राह्मणवाद मानववाद की मजाक उड़ाकर और अपनी झूठी प्रशंसा करके ही काम चलाने की कोशिश करता है, तर्क के बल पर नहीं।

विचार आचार और संस्कारों का विरोध :

बाल्मीकीय और तुलसीदास कृत रामायणों में मुख्य रूप से महामना बुद्ध के पदार्थवाद (अनात्मवाद) के विचार का विरोध और आत्मा-परमात्मा व पूर्वजन्म के विचार की प्रस्थापना, मानववादी समता का विरोध और जाति पांति की प्रस्थापना और शोषणहीन समाज के स्थान पर यज्ञादि के जरिये शोषण का प्रतिपादन किया गया है। इन दोनों संस्कृतियों के प्रतीक राम-रावण के चरित्र से भलीभांति इसका पता चल सके इसके लिये नीचे अलग-अलग उदाहरण दिये जा रहे हैं।

महामना बुद्ध आत्मा के अस्तित्व को नहीं स्वीकार करते थे और न वे यज्ञों को करणीय कर्म मानते थे। यज्ञों में वध किये जाने वाले पशुओं की रोकथाम के लिये उन्होंने अथक प्रयास किया। उन्होंने ब्राह्मणवादियों की इस बात का भली भांति खण्डन किया कि यज्ञ में मारे गये पशु स्वर्ग सिधार जाते हैं। उन्होंने ब्राह्मणवादियों से कहा कि यदि यज्ञ में मारे जाने से जीव स्वर्ग जाते हैं तो तुम पहले अपने माता पिता को यज्ञ में मारो ताकि वे निश्चित रूप से स्वर्ग जायें, इसका उत्तर ब्राह्मणवादियों के पास न था। अतः ब्राह्मणों को यज्ञ बंद करना पड़ा। वास्तव में यज्ञ ब्राह्मणों के शोषण का औजार थे। इसी प्रकार श्राद्ध के बारे में भी कोई उत्तर ब्राह्मणों से न बन पड़ा। बुद्ध और चार्वाक का अकाट्य तर्क कि किसी का दोबारा जन्म नहीं होता, परलोक के मिथ्या विचार को खत्म कर देता था, जब आत्मा नहीं तो पुनर्जन्म किसका और जब पुनर्जन्म नहीं तो प्रारब्ध या भाग्य कहाँ? जब भाग्य नहीं तो जाति-पांति कहाँ? और जाति पांति नहीं तो छुआछूत और ऊंच-नीच का भेदभाव मानव-मानव में कैसे हो सकता है? इस प्रकार महामना बुद्ध और दार्शनिक चार्वाक ने स्वर्ग, नरक और परलोक की कल्पना को मिथ्या सिद्ध कर दिया। ब्राह्मणों के पास इसका कोई उत्तर नहीं था। अतः उन्होंने कहानी रचना के जरिये वास्तविकता का पुट देने के लिये काव्य का सहारा लिया जिसमें तर्क नहीं भावनात्मक वर्णन मात्र है।

उपर्युक्त वैचारिक तथ्यों के विरोध में पंडित तुलसीदास ने राम चरित मानस की रचना की। उन्होंने प्राणों की रक्षा करने वाले असुरों, राक्षसों और निशाचरों को

अधर्मी कहा। क्योंकि जब सब मानव समान होंगे तो फिर उसमें न शोषण की गुंजाइश रह जायेगी, न जाति के नाम पर ऊंच-नीच का भेद भाव पनप सकेगा। पंडित तुलसीदास कृत रामचरित मानस में रावण की सबसे बड़ी अनीति और अधर्म का उदाहरण रावण का निम्नांकित आदेश है जो उसने अपनी सेना को दिया था-

द्विज भोजन मख होम सराधा। सब कर जाइ करहु तुम बाधा।।

(बालकाण्ड पृष्ठ 153)

अर्थ- तुम लोग जाकर ब्रह्मभोज, यज्ञ, हवन और श्राद्ध इन सब कामों में बाधा डालो अर्थात् इन्हें बंद करवा दो।

ब्रह्मभोज के पीछे परलोक में सुख पाने की कामना रहती है। जब परलोक ही नहीं और यह सिद्ध नहीं कि यदि परलोक हो तो भी ब्राह्मण उसके ठेकेदार हैं कि नहीं तब ब्रह्मभोज के पीछे अर्जकों का शोषण और ब्राह्मणों की मुफ्तखोरीही दिखाई पड़ती है। आज सभी जानते हैं कि किस प्रकार अर्जकों की गाढ़ी कमाई देश के ब्राह्मण ब्रह्मभोज, यज्ञ, हवन और श्राद्ध के नाम पर हड़प जाते हैं और बेचारे अर्जक ज्यों के त्यों दरिद्र रह जाते हैं। अनर्जक ब्राह्मण अर्जकों की गाढ़ी कमाई पर गुलछर्रे उड़ाते हैं। इसे कोई मानववादी शोषण विहीन समाज की कल्पना करने वाला कैसे सहन कर सकता है? अतः उपर्युक्त विकृत करके पेश किया गया रावण का आदेश तर्क की कसौटी पर शोषण विरोधी और मानव समता परक होने के कारण पूर्णतया मानववादी ठहरता है। आज भी अन्न संकट को देखते हुये सरकारें यह आदेश दती हैं कि शहरों में कोई भी व्यक्ति निश्चित संख्या से अधिक व्यक्तियों को किसी उत्सव में भोजन नहीं करा सकता। रावण के उपर्युक्त आदेश से ब्राह्मणों को छोड़कर सभी को लाभ था और शोषण से सभी को त्राण मिलता था। ब्राह्मण रात में यज्ञ, भोजादि करते थे उनको रोकने के लिये रात्रि में घूमने वाले रक्षकों की जो टोलियां नियुक्त की गयी थीं उन्हें निशाचर कहा जाता था। वेद में यज्ञ हवनादि का विधान है। रावण ने उसे अनुचित ठहराकर यदि उसी पर पाबंदी लगा दी तो पंडित तुलसीदास उसे अधर्म की संज्ञा देने लगे, यथा-

जेहि विधि होय धर्म निर्मूला। सो सब करहिं वेद प्रतिकूला।। (बा.का. 155)

ऋग्वेद के ऐतरेय ब्राह्मण के 'ब्राह्मणो मुखमासीत बाहु राजन्यः कृतः।' यानी उस ब्रह्म के मुख से ब्राह्मण, बाहु से क्षत्रिय हुये जैसे तर्कहीन मिथ्या बातों को कभी भी किसी धर्म विवेकशील व्यक्ति ने नहीं माना, तो फिर वेद के अनुकूल चलना धर्म कैसे हो सकता है, जो मिथ्या मान्यताओं की प्रस्थापना करता है। संक्षेप में यही रावण को अधर्मी कहने का कारण है। यथा-

शुभ आचरन कतहुं नहिं होई। वेद विप्र गुरु मान न कोई।।
नहिं हरिभगति यज्ञ तप ज्ञाना। सपनेहुँ सुनिअ न बेद पुराना।।
जप जोग विरागा तप मख भागा, श्रवण सुनइ दससीसा।
आपुनु उठि धावइ रहै न पावइ धरि सब घालइ खीसा।।
अस भ्रष्ट अचारा भा संसारा धर्म सुनिअ नहिं काना।।
तेहिं बहु विधि त्रासइ देश निकासइ जो कह बेद पुराना।।

(बालकाण्ड पृष्ठ 155)

राम यज्ञादि ब्राह्मण शोषण के साधनों के रक्षक चित्रित किये गये हैं, यथा-
प्रात कहा मुनि सन रघुराई। निर्भय जग्य करहु तुम जाई।।
होम करन लागे मुनि झारी। आपु रहे मख कीं रखवारी।।

(बालकाण्ड पृष्ठ 177)

राम वेद की हिंसा के समर्थक हैं, ऐसा तुलसीदास ने दिखाया है। जब भगवान ही हिंसक हैं तब फिर वेद की उक्ति चरितार्थ होती है। 'वैदिक हिंसा हिंसा न भवति।' यथा-

पावन मृग मारहिं जियँ जानी। दिन प्रति नृपहि देखावहिं आनी।।
जे मृग राम बान के मारे। ते तनु तजि सुरलोक सिधारे।।

(बालकाण्ड पृष्ठ 17)

जैसे यज्ञ में मारा हुआ पशु स्वर्ग जाता था वैसे ही राम के मारे जंगली जानवर भी। कैसा तर्कहीन वाक् छल है-

राम वेद की मर्यादा के पालक कहे गये हैं यथा-
श्रुति सेतु पालक राम तुम जगदीश माया जानकी।

(अरण्यकाण्ड पृष्ठ 413)

महामना बुद्ध मानव-मानव को बराबर मानते थे। किन्तु राम स्पष्ट रूप से आत्मा, परमात्मा, पुनर्जन्म का प्रतिपादन करते हुये कहते हैं-

मम माया संभव संसारा। जीव चराचर विविधि प्रकारा।।
सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सब ते अधिक मनुज मोहि भाए।।
तिन्ह महँ द्विज द्विज महँ श्रुतिधारी। तिन्ह महुँ निगम धरम अनुसारी।।
पुनि पुनि सत्य कहउँ तोहि पाहीं। मोहि सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं।।

(उत्तरकाण्ड पृष्ठ 1002)

यानी यह दुनिया और ब्राह्मण उन्हीं की रचना है, वे उन्हें अधिक प्रिय हैं। फिर जो वेद की रीति के अनुसार चलने वाले ब्राह्मण हैं वे तो उनके सबसे अधिक प्रिय हैं। तुलसी के राम जाति-पांति एवं सेवक-स्वामी की संस्कृति के सृजक और

उसको पुष्ट करने वाले हैं। जो एक मानव के लिये कलंक की बात होने के साथ साथ अविवेक की परिचायक है। संक्षेप में यह महामना बुद्ध के अनात्मवाद के स्थान पर आत्मवाद का तर्कहीन प्रतिपादन है। परमात्मा अवतार लेता है और आत्मा पुनर्जन्म धारण करती है। संक्षेप में यह बात पूरे रामचरित मानस में वर्णित है उसके उदाहरणों की आवश्यकता नहीं।

राम सीता पर संदेह करते हैं और कहते हैं कि-

राखिअ नारि जदपि उर माहीं। जुबती सास्त्र नृपति वस नाहीं।।

इसके विपरीत बारम्बार मंदोदरी उसके दुश्मन राम का उत्कर्ष बखानती और उसकी मौत राम के हाथों होने तक की गंदी बात कहती है, फिर भी रावण कभी मंदोदरी पर न तो शक करता है और न उससे कटु वचन कहता है, जैसा कि ब्राह्मणवादियों के देवता श्री शंकर पार्वती जी के इतना कहने पर ही डांट देते हैं कि जो राम वन में घूमते फिरते हमने देखे थे क्या वही सच्चिदानंद भगवान हैं। शंकर कहते है कि-

कहहिं सुनहिं अस अधम नर, ग्रसे जो मोह पिसाच।

पाखंडी हरिपद विमुख, जानहिं झूठ न साच।। (बाल काण्ड 104)

रावण ने अपनी बहिन के नाक कान कटवाने वाले राम की पत्नी को भी दुर्वचन नहीं कहे। सुमुखि सयानी आदि शब्दों से ही उसे संबोधित किया और उससे मिलने कभी अकेले नहीं गया। इससे रावण की मानववादी निष्ठा 'मानव-मानव बराबर है' स्पष्ट झलकती है। यही नहीं राम के कुकर्म का दण्ड सीता को देने को भी वह तैयार न था। अपराध तो राम-लक्ष्मण का था। अतः उन्हें ही बदनाम करके या मारकर दण्ड दिया जा सकता था जो उसने किया। अतः यहां भी रावण का चरित्र एक उत्तम मानव की भांति रहा, जबकि सूर्पनखा के साथ राम का छल व अभद्र व्यवहार विषमतामूलक ब्राह्मणवादी विचार के ही अनुरूप है। मानववाद में सभ्यता का मापदण्ड है जो तुम्हें बुरा लगे वह दूसरों के साथ मत करो। किन्तु ब्राह्मणवाद में इसका उल्टा है। रावण ने सीता के साथ न तो बलात्कार किया न करने दिया। इसकी साक्षी तुलसीदास के अनुसार सीता की अग्नि परीक्षा रही। तब ऐसे भले मानववादी उत्तम पुरुष रावण को अधर्मी की संज्ञा देना अविवेक और पक्षपात का ही सूचक है।

पूरे रामचरित मानस में रावण की कायरता का कहीं उल्लेख नहीं, जैसा राम का बालि को पेड़ की आड़ में छिपकर मारने में है। रावण की पत्नी उसके अनेक मंत्री, उसे राम के प्रताप का वर्णन करके डराते रहे, लेकिन वह कभी एक क्षण को नहीं डरा। उसे राम साधारण से व्यक्ति लगते थे तभी तो मुकाबला होने पर रावण कहता है-

आजु बयरु सब लेउँ निबाही। जौं रन भूप भाजि नहिं जाही।।

आजु करउँ खलु काल हवाले। परेहु कठिन रावन के पाले।।

(लंका काण्ड पृष्ठ 813)

रावण के सामने देवता भाग जाते थे। अतः उसे शंका होना स्वाभाविक था कि कहीं यह भी न भाग जाये। रावण के बारे में यह सच्चाई पंडित तुलसीदास द्वारा उसके विकृत चित्रण के बाद भी प्रस्फुटित हुई है।

उपर्युक्त चन्द उदाहरणों से राम रावण के चरित्रों का अंतर स्पष्ट हो जाता है। राम व्यवहार एवं आचरण में ब्राह्मणवादी होने के कारण मानव विषमता के पोषक थे, यहां तक कि उनके पीछे चलने वाली सीता व लक्ष्मण उनके पैरों के निशान पर पैर नहीं रख सकते थे। इसलिये वे डरकर रास्ते में चलते रहे कि कहीं भूल से राम के पैरों के निशान पर उनका पैर न पड़ जाये। ब्राह्मणवादी विषमता का ज्वलंत उदाहरण यथा-

प्रभु पद रेख बीच बिच सीता। धरति चरन मग चलति सभीता।।

सीय राम पद अंक बराएँ। लखन चलहिं मगु दहिन लाएँ।।

(अयोध्या काण्ड पृष्ठ 410)

महामना बुद्ध के अनुसार शीलों का पालन सदाचरण है उसका अनुगमन यदि मनुष्य मात्र करे तो वे दुनियाके दुख से छूट सकते हैं किन्तु राम संसार के दुखों से मुक्ति का उपाय इस प्रकार बताते हैं -

मम कृत सेतु जो दर्शन करिहैं। ते बिनु श्रम भवसागर तरिहैं।।

(लंकाकाण्ड पृष्ठ 708)

मोहि सहित शुभ कीरति तुम्हारी परम प्रीति जो गाइ है।

संसार सिंधु अपार पार, प्रयास बिन नर जाइ है। (लंकाकाण्ड पृष्ठ 912)

कहाँ सदाचार पर आधारित मानववाद और कहाँ दुराचार का जनक ब्राह्मणवाद जिसमें मूर्ति पूजा तीर्थादि और भजन कीर्तन से पापों का नाश होकर संसार के दुखों से छुटकारा मिल जाता है तभी तो इस समय तस्कर व्यापारी और भ्रष्टाचारी भजन, कीर्तन मूर्ति पूजा और तीर्थादि करके तर रहे हैं। राम द्वारा प्रतिपादित ब्राह्मणवाद पतनकारक हैं। उसमें केवल ब्राह्मणों की प्रसन्नता से ही सारा काम सध जाता है राम स्वयं कहते हैं-

सानुकूल तेहि पर मुनि देवा। जो तजि कपटु करइ द्विज सेवा (उत्तरकाण्ड)

ब्राह्मणों की सेवा और उनके द्वारा किये जा रहे शोषण और ऊंच-0नीच एवं जाति पांति का पोषण कभी भी समाजोत्थान कारक न हुआ है न हो सकता है।

अतः ऐसी अविवेकपूर्ण बातों को कहने वाले राम आदर्श पुरुष तो कभी कहे ही नहीं जा सकते।

महामना बुद्ध प्रकृति के नियमों को अटल मानते थे किन्तु रामचरित मानस उसे विधाता की इच्छा पर छोड़ता है-

भरद्वाज सुनु जाहि जब होइ विधाता वाम।

धूरि मेरूसम जनम यम, ताहि व्यास सम दाम।। (अरण्यकाण्ड)

अर्थ- हे भरद्वाज सुनो! विधाता जब जिसके विरुद्ध होता है तब उसे धूल पहाड़ हो जाती है पिता यमराज बन जाता है और रस्सी सांप हो जाती है।

भला कोई भी रस्सी के सांप बनने की बात किसी काल व परिस्थिति में मान सकता है प्रकृति के नियमानुसार रस्सी सांप बन बन ही नहीं सकती। स्पष्ट है कि ब्राह्मणवादी मान्यता तर्कहीन भय पर आश्रित है। जो मनुष्य को अकर्मण्य बनाकर विधाता की इच्छा पर छोड़ देती है। ऐसी संस्कृति मानव-उत्थान कर ही नहीं सकती।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि राम रावण के कल्पित पात्रों से ब्राह्मणवादी तुलसीदास ने ब्राह्मणवादी संस्कृति को मानववादी संस्कृति से श्रेष्ठ एवं अनुकरणीय बताने का प्रयास किया है। अब जब भारत का संविधान मानव-मानव की बराबरी का प्रतिपादन करता है तो उसके विपरीत मान्यता का कोई भी ग्रंथ संविधान विरोधी होने के कारण त्याज्य और बहिष्कार करने के ही योग्य है फिर उस त्याज्य संस्कृति के लिये रामलीला की छूट देना तो एकदम संविधान विरोधी कर्म है। कल्पित पात्रों को लेकर रामलीला की छूट देना तो एकदम संविधान विरोधी कर्म है।कल्पित पात्रों को लेकर संविधान विरोधी काम करना सर्वथा निदनीय और दण्डनीय ही कहा जायेगा। अतः रामलीला करना सर्वथा अनुचित है। राम रावण जैसे कल्पित पात्रों के लिये राष्ट्रीय एकता को हानि पहुंचाकर पूरी तौर पर अविवेकपूर्ण ही कहा जायेगा।

अर्जक संघ द्वारा प्रकाशित पुस्तक सूची

क्रमांक/पुस्तक का नाम	लेखक का नाम
1. क्रांति क्यों और कैसे	महामना रामस्वरूप वर्मा
2. क्रान्ति पथ	महामना रामस्वरूप वर्मा
3. मानववाद बनाम ब्राह्मणवाद	महामना रामस्वरूप वर्मा
4. मानववादी प्रश्नोत्तरी	महामना रामस्वरूप वर्मा
5. ब्राह्मण महिमा क्यों और कैसे?	महामना रामस्वरूप वर्मा
6. मनुस्मृति राष्ट्र का कलंक	महामना रामस्वरूप वर्मा
7. अछूत समस्या और समाधान	महामना रामस्वरूप वर्मा
8. वैवाहिक कुरीतियाँ	महामना रामस्वरूप वर्मा
9. आत्मा का मिथ्यात्व	महामना रामस्वरूप वर्मा
10. अम्बेडकर साहित्य की जब्ती और बहाली	महामना रामस्वरूप वर्मा
11. अर्जक संघ का सिद्धान्त वक्तव्य...	महामना रामस्वरूप वर्मा
12. देश में एक ही राजनीतिक विकल्प	महामना रामस्वरूप वर्मा
13. राष्ट्रीय शिक्षा का विकल्प	राम बाबू कनौजिया
14. जय शम्बूक और सर्वहारा शतक	प्रो० शिव कुमार भारती
15. अर्जक मशाल	गंगाराम लोधी
16. सृष्टि और प्रलय	चौ० महाराज सिंह भारती
17. नीति से भटकी राजनीति	चौ० महाराज सिंह भारती
18. कृषि क्रान्ति और किसान नेतृत्व	चौ० महाराज सिंह भारती
19. महान भारत के बौने नेता	चौ० महाराज सिंह भारती
20. नीति, राजनीति व विदेश नीति कैसी और क्यों	चौ० महाराज सिंह भारती
21. समाजवाद दर्शन विज्ञान और आचरण	चौ० महाराज सिंह भारती
22. गन्ना-चीनी समस्या अैर समाधान	चौ० महाराज सिंह भारती
23. चौ० महाराज सिंह भारती का जीवन संघर्ष	सदानन्द वर्मा
24. अर्जक विवाह गीत माला	मेवालाल
25. ज्योतिष अनुमान है विज्ञान नहीं	इन्द्रासन कुशवाहा
26. बदलाव की आहट	विन्ध्येश्वरी प्रसाद 'विन्ध्य'
27. विवाह प्रतिज्ञापन प्रमाण पत्र	
28. शोक पत्र- सह मृत्यु प्रमाण पत्र	

पुस्तक प्राप्ति स्थान

अर्जक संघ कार्यालय, 117/2, ओ-ब्लाक, गीता नगर, कानपर-25

मो० : 9839031178, 8299824329

Akshaya Prakashan • 9336210971